मालवीय प्रकाश

मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान की हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष -5 | अंक - 11 | जयपुर | अगस्त - अक्टूबर 2022 | पृष्ठ संख्या - 1

निदेशक की कलम से ...

आचार्य (डॉ.) नारायण प्रसाद पाढी

निदेशक- मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जयपुर

मैं संस्थान के सभी विद्यार्थियों, संकाय सदस्यों व अन्य कर्मचारी सदस्यों, पाठकों एवं लेखकों का ''मालवीय प्रकाश'' हिंदी त्रैमासिक पत्रिका के माध्यम से आप सभी का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ तथा हृदय के अन्तःस्थल से शुभकामनायें प्रेषित करता हूँ।

मुझे इस बात का हर्ष व गौरव है कि हमारा संस्थान तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में देश के कुछ चुनिंदा लोकप्रिय संस्थानों में स्थान रखता है। यह उपलब्धि आप सभी के अथक प्रयासों का ही प्रतिफल है, इसके लिये आपको मेरा अनेकानेक साधुवाद।

हम भारतीय वैश्विक स्तर पर हो रहे समृद्ध अनुसंधान व शोध की परंपरा के स्तर पर पहुंचने में काफी हद तक सफल हुये हैं पर मेरा ऐसा मत है कि अगर हम हमारे प्राचीन ऋषि महर्षि के अनुसंधान कार्य शैली व परिणाम को भी सम्मिलित करें तो हम निश्चित तौर पर वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में विश्व में श्रेष्ठ होंगे। इसके अतिरिक्त व्यक्तित्व विकास को मैं सर्वोपरि महत्व देता हूँ। एक सुसंस्कृत, दयावान, विनम्र, सेवाभावी, विवेकशील, त्यागी, सहनशील, शांतिप्रिय एवं सरल व्यक्ति ही एक सुंदर समाज व विश्व का निर्माण कर सकता है। इन गुणों से परिपूर्ण मानव ही विज्ञान एवं तकनीक के विकास को रचनात्मक दिशा में ले जा सकते हैं।

शिक्षकों से मेरा कहना है कि मात्र व्याख्यानों से हम विद्यार्थियों को सद्व्यवहार व सद्कर्मों की प्रेरणा नहीं दे सकते हैं, अतः हमें अपने आचरण से उनके समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करने होंगे। विद्यार्थियों को समय के मूल्य को समझना चाहिये, अपने जीवन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उन्हें कठिन परिश्रम करना होगा एवं उन्हें सुसंगति में रहना होगा। जीवन का उद्देश्य विराट होना अच्छी बात है पर जिस रास्ते से वह हासिल करें वह भी उतना ही उच्च होना चाहिये।

इस संस्थान ने अकादमिक एंव तकनीकी ऊँचाइयों का जो स्थान हासिल किया है उसके लिये संस्थान के सभी सदस्य विशेष रूप से विद्यार्थीगण भूरि भूरि प्रशंसा के पात्र है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप जहां भी रहकर अपनी सेवाऐं देंगे वहाँ आप स्वयं अपना, अपने परिवार, संस्थान एवं राष्ट्र का नाम रौशन करेंगे।

इस पत्रिका के जरिये जो भी लेखकगण मातृभाषा में अपने उद्गार अत्यंत सुरुचिपूर्ण ढंग से उद्भाषित करते है, इसके लिये आप सभी लेखकगण को बहुत बहुत साधुवाद, आपके इस प्रयास से अन्य हिन्दी प्रेमी पाठकों को प्रेरणा व उत्साह मिलता है।

मैं आप सभी के सुंदर भविष्य के लिये शुभकामनायें करता हूँ और सभी का चहुँमुखी विकास हो, हिंदी भाषा के विकास के उत्थान में सदैव सहभागी रहें, ऐसी कामना करता हूँ।

स्नेह व शुभकामनाओं सहित

आचार्य नारायण प्रसाद पाढी

महामना पंडित मदन मोहन मालवीय एक विलक्षण व्यक्तित्व

''भारत की एकता का मुख्य आधार है एक संस्कृति जिसका उत्साह कभी नहीं टूटा, यही इसकी विशेषता है।'' मदन मोहन मालवीय

एक अनमोल शख्सियत

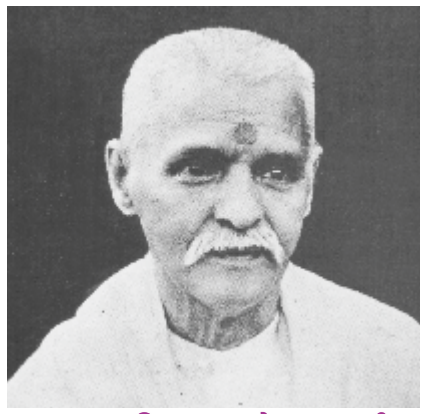

महामना पंडित मदन मोहन मालवीय

करूणा और सौहार्द

करूणा और सौहार्द मालवीयजी के जीवन के जौहर थे। अपने भृत्यों और पार्श्वतियों के प्रति भी उनका व्यवहार कोमल, मधुर और अनुग्रहपूर्ण होता था। वे बहुत कष्ट सहते हुए भी अपने नौकरों के आराम का ध्यान रखते, तथा अपने कारण उन्हें कष्ट नहीं होने देते थे। इस सम्बन्ध में पण्डित रामनरेश त्रिपाठी ने बताया कि एक बार पटना के प्रसिद्ध वैद्य पंडित ब्रजबिहारी चौबेजी ने मालवीयजी को एक काढ़ा पीने की सलाह दी। उसे तैयार करके ठीक समय पर पिलाने के लिए नौकर को प्रातःकाल चार बजे उठना पड़ता था। उसे इतना कष्ट देना अनुचित समझ मालवीयजी ने काढ़ा पीना ही बन्द कर दिया। जब दस-पन्द्रह दिन के बाद नौकर को कारण का पता चला, तब उसने उसका प्रबन्ध किया। रामनरेशजी के एक प्रश्न के उत्तर में मालवीयजी ने उनसे कहा कि 'रामनरेशजी', हम तो गरीब आदमी हैं। इससे गरीब के प्रति हमारी सहानुभूति स्वाभाविक है। नौकरों को मैं कुटुम्ब से भिन्न नहीं समझता। मेरे यहाँ नौकर के साथ जैसा व्यवहार होता है, वैसा धनी परिवारों में भी नहीं होता। रामनरेशजी ने स्वयं लिखा हे, मुझे घूमने का तो बहुत मौका मिला हे, और मेरा परिचय राजा से लेकर साधारण गृहस्थ तक प्रायः हरेक श्रेणी और हरेक सुरूचि के लोगों से है, पर नौकरों के प्रति जैसी आत्मीयता मैंने मालवीय जी में देखी, वैसी यहाँ के पहले कहीं देखी नहीं थी।

शेष पृष्ठ 5 पर...

सम्पादकीय...

प्रिय पाठकों,

नमस्कार,

'कोरोना काल' के एक लंबे अंतराल के बाद बहुत से दुःखोंको झेलने और सीखों का उपहार ग्रहण करने के बाद आइये हम नये जीवन की शुरूआत करते हैं और इस नये सत्र में सबके मंगलमय जीवन की कामना करते हैं। ''मालवीय प्रकाश'' के 11वें संस्करण के द्वारा हम पुनः सबके जीवन के विभिन्न क्षेत्रों व हमारे बौद्धिक, मानसिक, भावनात्मक एवं आध्यात्मिक धरातलों से रचनारूपी उपजी कोमल अभिव्यक्तियों को एक धरातल प्रदान करने की आकांक्षा रखते हैं, जो आप सभी प्रबुद्ध पाठक व लेखक गणों के सहयोग के बिना असंभव है।

हिंदी को लुप्त होने से बचाने में आपका प्रयास कुछ तथाकथित विद्वानों को बूंद मात्र समान लग सकता है पर उन्हें भूलना नहीं चाहिये कि बूंद-बूंद से ही घड़ा भरता है। हिंदी प्रेमी व राष्ट्र प्रेमियों को यह अटूट विश्वास है कि अतिशीघ्र ही भविष्य में कुशल व समर्पित कर्णधारों के नेवृत्व में हिंदी वैश्विक स्तर पर एक सम्मानीय स्थान ग्रहण करेगी।

पाठकगण ''मालवीय प्रकाश'' के गत संस्कारों की तरह भविष्य में भी अपने उद्गारों से हिंदी भाषा के प्रचार प्रसार में योगदान देते रहेंगे क्योंकि स्वभाषा में ही अपने विचारों का आदान प्रदान सबसे आसान व प्रभावपूर्ण तरीके से कर सकते हैं जो सभी के सर्वांगीण विकास के लिये अति आवश्यक है। हमारे लेखकगण समाज के सरोकारों के प्रति कितने सजग व संवेदनशील हैं, इस अंक की रचनायें इस बात को प्रमाणित करती हैं।

सभी लेखकों व पाठकों की रचनात्मक प्रतिभा के विकास के लिये ढ़ेर सारी शुभकामनाओं के साथ। सस्नेह,

आपकी शुभाकांक्षी

भवदीया,

डॉ. ज्योति जोशी

सम्पादिका एवं आचार्य, रसायन शास्त्र विभाग, मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जयपुर

9413971604, 9549654852, jojo_jaipur@yahoo.com | malaviyaprakash.lokmat@gmail.com | jjoshi.chy@mnit.ac.in

मूल्यों की पुनर्स्थापना

विद्वानों ने आदिमकाल से ''गुरू'' को सर्वोपरि माना हैं, कहा जाता हैं, किसी इंसान को अनुभव के एक आयाम से दूसरे आयाम में ले जाने के लिए एक साधन की या एक उपाय की आवश्यकता होती है, जिसकी तीव्रता और ऊर्जा का स्तर उसके मौजूदा स्तर से ऊपर हो, इसी साधन को ऋषियों ने ''गुरु'' शब्द से परिभाषित किया हैं। आज हम शिक्षा जगत के सबसे दूषित परिवेश में है जहाँ शिक्षा प्रणाली विभिन्न काल खंडों में अलग-अलग विचारधाराओं से कुंठित होती चली जा रही हैं। बाजारवादी और पूंजीवादी मानसिकता ने हमारे उन मूल्यों को गहरा आघात पहुँचाया हैं जो कभी हमारे विश्व गुरू होने के सूचक थे।

गुरू और शिष्य के बीच एक ऐसा अनूठा और अद्वितीय सम्बन्ध जो ना केवल भविष्य अपितु राष्ट्रनिर्माण का भी मूल कारक हो सकता था, हम उसे खोते जा रहे हैं। आज हम शिक्षा की ऊँचाई पाठ्यक्रम की कठोरता और उससे अर्जित पूँजी से माप रहे हैं किन्तु सत्य यह है कि हम उच्च शिक्षा तो प्राप्त कर रहे हैं किंतु जीवन जीने की वास्तविक शैली और मूल्यों को नजर अंदाज करके अंततः उसके प्राप्त निःसंदेह ज्ञान तो होगा पर उसके जीवन जीने की शैली विचित्र होगी। शिक्षा के व्यवसायीकरण तक भी हमारे मूल्यों के कुछ अवशेष शेष बचे थे किन्तु शिक्षा का बाजारीकरण करने वालों ने उसे भी नष्ट कर दिया।

आज हमें आवश्यकता है कि हम ''गुरू-शिष्य'' के संबंधों को पुनः स्थापित करने का प्रयास प्रारंभ करे, परस्पर सम्मान और विश्वास की वो ऐतिहासिक परम्परा एक बार फिर से व्यवहार में लाई जाये, जिससे हम शिक्षा में संस्कार और राष्ट्रवाद के भावों को फिर से निहित कर सके। हमें ऐसे विद्यार्थियों को निर्मित करने से बचना होगा जो यंत्र चलित उपकरणों की तरह सारा ज्ञान तो रखते हो किन्तु उनकी राष्ट्र के प्रति कर्तव्यों का निर्वहन करने की प्रवृत्ति एवं व्यवहार कुशलता शून्य हो। यद्यपि इसका ये अर्थ बिलकुल नहीं की हम पुनः आश्रम व्यवस्था में लौट जाये किन्तु हमें उन प्राचीन परम्पराओं में निहित भावों और संस्कारों को वर्तमान शिक्षा पद्धति में कैसे समावेशित करे इस पर विचार करना चाहिए। शिक्षा के सैद्धान्तिक विकास का सूत्र इन्हीं प्राचीन परम्पराओं के केंद्र में है, हमे इन मूल्यों को पुनः स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए। अन्यथा हम कभी एक अच्छे समाज का निर्माण नहीं कर पाएंगे।

- जितेन्द्र परमार

शोधार्थी-संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विभाग

इस अंक में ...

विवरण	पृष्ठ संख्या
निदेशक की कलम से ...	1
महामना - एक विलक्षण व्यक्तित्व	1
सम्पादकीय	1
मूल्यों की पुनर्स्थापना	1
सुखद बुढ़ापा	2
जीवन में 'गुरु' का महत्त्व	2
वो और कोई नहीं - मेरी माँ है	2
जीवन पथ	2
सत्य	2
प्रकृति	3
प्रेम और स्त्री	3
स्वस्थ्य जीवन	3
शांति	3
मुझको प्रकाश दो	3
ग़जल	3
सूरज	3
बेकसूर कैदी	4
बुद्धिमान बालक और राजा की कहानी	4
शिक्षक	4
श्वान	4
छांव	4
जीवन	4
भारतीय संस्कृति	4
आजादी का अमृत महोत्सव	4
प्रकृति के शोषण नहीं दोहन की भावना	4
करूणा और सौहार्द	5
हमारे प्रश्न भक्ति वेदांत स्वामी प्रभुपाद से उत्तर	5
गुलशन	5
श्रद्धांजलि	5
बुद्धिमान बालक और राजा की कहानी	5
दिव्य नेत्र	6
वक्त	6
राब्ता	6
विचार की शक्ति जानें	6
माँ	6
माँ के बिना दिनचर्या	6

सुखद बुढ़ापा

वृद्धाश्रम में जाने का कारण माता-पिता स्वयं बनेगे आधुनिकिकरण के कारण।

एक आठ वर्ष के बालक का आज टेस्ट का परिणाम आया। बच्चे ने कक्षा में प्रथम स्थान हासिल किया। बहुत खुश अपने परिणाम से घर पहुँचते ही मम्मी-मम्मी चिल्लाने लगा। मम्मी फेसबुक चलाने में थोड़ा व्यस्त थी, इसलिए बच्चे की खुशी को समझ ही नहीं पाई। माँ का कहना है, दिन-भर काम करती हूँ, अगर थोड़ी देर मोबाईल चला लिया तो क्या गुनाह कर दिया। बच्चे ने बड़ी खुशी से अपनी मम्मी को परिणाम दिखाया। माँ का ध्यान मोबाईल में था बिना देखे उन्होंने पेपर पर साईन कर दिया। वह बालक जो दिन भर से खुश था, उत्साहित था, उसका चेहरा फीका पड़ गया। माँ को यह सब आम बात लग रही थी, आखिर वो ही तो बच्चे के सारे काम करती है, टिफिन बनाना, नहलाना, तैयार करना। पर बच्चा तो आखिर बच्चा होता है, उसे तो यह लगने लगा कि माँ को कोई खुशी ही नहीं हुई। शाम को पिता जब काम से लौटे तो बच्चे ने पिताजी को अपना परिणाम दिखाया उसे उम्मीद थी कि पापा शाबाशी देंगे। पर बेचारा निराश बच्चा, पाप ने बोला माँ को दिखा दिया, मैं थका हुआ हूँ, अभी आराम करना है, तुम जाकर पढ़ाई करो। पिताजी को भी लगता है मैं दिन-रात मेहनत करता हूँ, स्कूल की फीस भरता हूँ, मैं अपने सारे कर्तव्य अच्छी तरह से पूरे करता हूँ। अगले दिन वो बच्चा स्कूल पहूँचा, पूरी कक्षा ने उसके लिए ताली बजाई, पर उसका मन अभी भी उदास था। ऐसा चार महीनों तक चलता रहा, बच्चे को धीरे-धीरे लगने लगा कि उसके माता-पिता को उसकी कोई परवाह ही नही है। धीरे-धीरे उसका पढ़ाई में ध्यान कम होने लगा। परिणाम पर बुरा प्रभाव पड़ा। जो बच्चा कभी प्रथम आता था वह अब कमजोर बच्चे की श्रेणी में आने लगा। माता-पिता को मिलने बुलाया गया। माता-पिता को जब परिणाम दिखाया गया तो बजाय यह कारण जानने के कि ऐसा क्यों हुआ, दोनों ने मिलकर बच्चे को डाँटना शुरु किया। पिताजी ऊँचे स्वरों में बोले ''मैं इतनी मेहनत कर रहा हूँ, इतने अच्छे स्कूल में पढ़ा रहा हूँ ताकि तुम मुझे ऐसा परिणाम दो, बेटा इससे अच्छा तो मैं तुम्हें सरकारी में पढ़ाता'' माता-पिता को आभास भी नहीं है कि कही न कही गलती उनकी भी है। सिर्फ फीस भर देने से या टिफीन बना देने से आपके कर्तव्य पूरे नहीं हो जाते। माँ का कहना है कि घर पर तो यह सुनता नहीं है इसे हॉस्टल में डाल दो, वहाँ अक्ल ठिकाने आयेगी।

हालांकि हॉस्टल में भेजना, माता-पिता के लिए भी एक बहुत कठिन निर्णय है, पर कहीं न कहीं बच्चे को हॉस्टल भेजकर वो अपनी जिम्मेदारियों से पल्ला झाड़ रहे हैं। नौ साल के बच्चे को आप हॉस्टल में भेज दोगे, अगले दस साल वो अपने हॉस्टल में व्यतीत करेगा, फिर उसे बच्चे से आप कैसे उम्मीद करोगे की पढ़ाई पूरी करने के बाद वो आपके साथ रहेगा। जब बचपन में आपने अपनी जिम्मेदारियाँ से बचने के लिए उसे हॉस्टल भेज दिया, वो अपनी जिम्मेदारियों से बचने के लिए आपको वृद्धाश्रम भेज देगा। हाँ अपने उसका पूरा खर्चा उठाया, उसे उच्च से उच्च व्यवस्था मुहैया कराई, वह आपके लिए भी उच्चतम व्यवस्था करेगा। जब बचपन में आप अपना काम छोड़कर उसकी खुशी में शामिल नहीं हुए तो फिर बुढ़ापे में आपके दुःख में वो क्यों साथ देगा। बालक जब नासमझ था, तब भले ही आपने कितने संघर्ष किये उसके लिए, लेकिन जब हो समझदार हुआ, उसने जो देखा, वह तो उसे ही सत्य स्वीकार करेगा। गलती माता-पिता की भी नही है, शायद उन्होंने इस नजरियें से कभी सोचा ही नही, उन्हें बस लगता है, हम कमाले ताकि हमारा बच्चा खुश रहे, पर असल में बच्चा खुश है ही नहीं। अब बुढ़ापे में दोष देने से क्या होगा। बचपन में कोई गलत बात यदि मन में बैठ जाए तो वह जिन्दगी भर तकलीफ देती है, इसलिए इस आधुनिक जमाने में एक सुखद बुढ़ापे की इच्छा है तो फिर इन छोटी-छोटी चीजों पर ध्यान दें।

रिषभ जैन- तृतीय वर्ष, मैकेनिकल अभियांत्रिकी विभाग

वो और कोई नहीं - मेरी माँ है

मुझे तो ठीक से याद भी नहीं, उस समय मेरी उम्र क्या रही होगी? अंदाजे से सात-आठ वर्ष रही होगी। मैं बाहर खेलने के लिए जाने की ज़िद पर अड़ा था और ''वो'' भी मेरे सामने मुझे रोकने के लिए खड़ी थी। ना ''वो'' मानने को तैयार थी, ना मैं उसकी कोई बात सुनने को राजी था। ''उसने'' दरवाजे को ताला लगाकर चाबी मुझसे दूर रख दी। पर ''वो'' यह भूल गई कि जिद के मामले में मेरा कोई सानी नहीं। जैसे ही वो इधर -उधर हुई मैं दीवार कुदकर चला गया। वेमुश्किल पचास साठ कदम चले मैंने कि रास्ते में मेरी मुलाकात ''किसी'' से हुई। यह ''किसी'' वो नहीं थी बल्कि यह तो एक कुत्ता था। हमारे बीच एक दौड़ प्रतियोगिता हुई और मेरी बदनसीबी यह थी कि वह प्रतियोगिता मैं हार गया और कुत्ता मुझे जिंदगी भर के लिए कुछ निशान दे गया। मैं रो रहा था, किसी ने मेरे पापा को बताया। पापा आये और मुझे अस्पताल ले गए। डॉक्टर के दो इंजेक्शन लगे, तब समझ में आया कि मुझे उसकी बात मान लेनी चाहिए थी। अब कुत्ते और इंजेक्शन के दर्द से भी बड़ा डर था कि 'उसका' सामना कैसे करूंगा। पापा तो अपने हिस्से का डॉट ही चुके थे, अब 'उसकी' बारी थी। शायद गुस्सा तो 'उसे' भी बहुत आया होगा पर 'उसने' इसे छिपाकर मेरे सिर पर प्यार से हाथ रखकर बोला, ''मेरे बहादुर बेटे, तू जल्दी ही ठीक हो जाएगा।'' यह सुनकर मेरे सारे दर्द खत्म हो गए। जी हाँ, 'वो' और कोई नहीं मेरी माँ है।

विनीत तपरिया
बी.टेक, तृतीय वर्ष, धातुकी अभियांत्रिकी विभाग

जीवन पथ

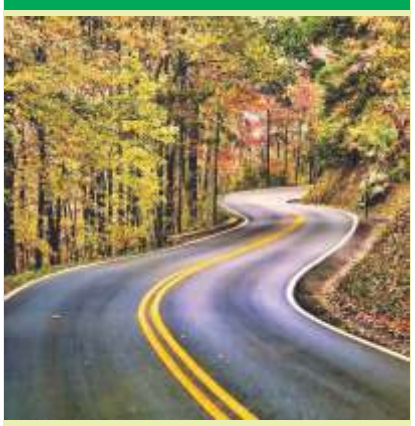

जीवन के दो सच्चे साथी,
धैर्य और विश्वास है।
पा लोगे तुम हर मंजिल को,
बस रखना इनको साथ है।
वक्त लेता है कठिन परीक्षा,
लंबे इसके इम्तेहान है।
हारा हुए जो लगे किसी मोड़ पर,
साथ दे खुद पर विश्वास है।
वक्त जो लगे फिसलता हाथ से,
लगे जब कुछ ना हाथ है।
धैर्य दिलाए हिम्मत तुमको,
बस कुछ दिन की ओर बात है।
कठिन डगर लगे जब तुमको,
धैर्य, विश्वास को साथ बनाना
कौन तोड़ पाया है दृढ़ संकल्पों को,
आजमाने दो वक्त को जितना है
आजमाना।

अतिरेक गौड़
बी.टेक, द्वितीय वर्ष
धातुकी अभियांत्रिकी विभाग

जीवन में 'गुरु' का महत्त्व

गुरु दीपक, गुरु चारणों, गुरु बिन घोर अंधारा ये पक्तियां अपने आप में गुरु की पूर्णता को लिए हुए है अर्थात् जिस प्रकार दीपक और रोशनी ना हो तो तेल और बाट की कोई महत्ता नहीं रह जाती उसी प्रकार जिस जीवन में गुरु रूप सौभाग्य ना मिला हो उसका जीवन अंधकार अर्थात् मुश्किलों भरा होता है।

सौभाग्यशाली है वे सब जिन्हें हर पड़ाव पर गुरु मार्गदर्शन देते हैं। चाहे वो जन्म लेते ही माँ हो या जीवन के अन्तिम पड़ाव पर अपनी आत्मा के कल्याणकारी पथ पर चलाने वाले हमारे धर्म गुरु। गुरु का तो अर्थ ही गु अर्थात् अंधकार + रु अर्थात् मिटाने वाला। जहाँ गुरु है वहाँ अंधकार रूपी मुश्किलों का कोई स्थान नहीं रह जाता। गुरु की आवश्यकता हर क्षेत्र में और हर किसी को होती है। चाहे वह ज्ञान-विज्ञान का क्षेत्र हो, समाज के विकास का क्षेत्र हो, आध्यात्मिक क्षेत्र हो या विद्या-अर्जन का क्षेत्र और उत्तम जीवन यापन का क्षेत्र। यहाँ तक कि ब्रह्माण्ड के संचालन में भी सहयोगी उत्तम ऊर्जा के रूप में बृहस्पति ग्रह को देव गुरु की संज्ञा से नवाजा गया है। यहाँ तक कहते है कि एक अकेला गुरु ग्रह बृहस्पति अन्य सभी ग्रहों के परिणामों का सम्भालने की शक्ति रखता है।

इसी प्रकार मनुष्य जीवन में भी गुरु तत्त्व भिन्न-भिन्न रूपों में सहयोगी बनकर हर कदम पर अपने वाली मुश्किलों से बाहर निकालते हुए जीवन को सार्थक बनाने तक की राह आसान बना देते हैं।

गुरु की कृपा हो तो हम विद्या अर्जन ही नहीं, उसके द्वारा अपने नैतिक मूल्यों का विकास विद्या का अपने जीवन में सदुपयोग, समाज में एक सुश्रावक व्यक्तित्व, परस्पर सहयोगी, धार्मिक, विनयशील, सब जीवों के प्रति सद्भावना, आत्म कल्याण की भावना यहाँ तक कि देश के सहयोगी जैसे गुणों का अपने में विकास कर सकतें। गुरु के मार्गदर्शन में ही इन सब गुणों का विकास संभव है क्योंकि गुरु अपने ज्ञान के साथ आशीर्वाद में हमें वो इच्छाशक्ति प्रदान कर देते हैं जो अनन्त पुण्य के परिणामस्वरूप मिलती है। कई बार तो हम अन्दाजा भी नहीं लगा पाते भी गुरु कृपा से संभव हो जाता है।

बचपन में माता-पिता फिर स्कूल के शिक्षक, यहाँ तक कि कभी-कभी बचपन में सही मार्ग दिखाने वाले हमारे विभिन्न इतर विद्याओं (संगीत, कला आदि) के शिक्षक, कर्म करके जीविकोपार्जन की राह सिखाने वाले गुरु, सामाजिक व्यवस्थाओं को समझ कर सहयोगी बनने की राह दिखाने वाले समाज के बड़े-बुजुर्ग, आध्यात्म की राह दिखाने वाले हमारे धर्म-गुरु आदि अनेक गुरुओं की बदौलत ही हम इतना सुंदर जीवन जी पाते हैं। यदि कदम-कदम पर इन सबका मार्ग दर्शन ना मिले तो राह में भटकने की बड़ी संभावनाएं रहती है। अतः अनेक पुण्य का फल है ये हमारे सभी गुरु जो हमें दीपक की तरह हर मोड़ पर सही मार्गदर्शन देकर सहज ही आगे बढ़ा देते हैं और सफलता के अधिकारी हम बन जाते हैं। हमें यह अहसास सदैव रहना चाहिये जो गुरु हर समय सामने नहीं दिखते परन्तु उनके प्रयास हमारी सफलताओं में नजर आते हैं। गुरु आत्मशक्ति को जगाकर हमारी उन्नति से ही सन्तुष्ट और गौरवान्वित होते है। इतना महान् है गुरु का गुरुत्व जो जीवन में सब कुछ दिला जाता है और हम सफलता के कभी ना समाप्त होने वाले शिखर पर चढ़ते जाते हैं। यहाँ तक कि इह लोक के गुरु का आशीर्वाद हमारे परलोक को भी वैभवशाली सम्पन्न बना देता है। सही कहूँ तो मोक्ष मार्ग के सारथी है गुरु जो हर कठिनाईयों में हमारा मार्गदर्शन कर बचाते हुए अनन्त सुख, अनंत चैतन्यता, अनंत सामर्थ्य, अनंत आनंद, अनंत शक्ति की प्रेरणा देकर जीवन की पूर्ण सफलता प्राप्त करवा देते हैं।

इतना अद्भूत है गुरु का सानिध्य मार्गदर्शन और आशीर्वाद। धन्य है वह जीवन जिसे गुरु मिलता है फिर उसके लिए कुछ भी असम्भव नहीं होता। अतः हमें अपने गुरु के उपकारों को कभी नहीं भूलना चाहिये। गुरु वह शक्ति है जो निर्बल में प्राणों का संचार (आत्मविश्वास) कर दे, गुरु वह है जो हर उलझन को अपने ज्ञान-अनुभव से सहज ही सुलझा दें तो संसार में ऐसा क्या है जो गुरु के आशीर्वाद और कृपा से प्राप्त ना हो सके अर्थात् सब कुछ संभव है। गुरु के लिए कहा है कि गुरु हमें भगवान से मिलाते हैं। अरे! मैं तो यह जानती हूँ कि गुरु हमें भगवान बनाने में सहायक है। पूर्ण श्रद्धा से गुरु के दिखाये मार्ग पर चलें तो हम अपना आत्मकल्याण करते हुए एवं सभी कर्तव्यों का सहज समता भाव से निर्वाह करते हुए अपने आराध्य भवगान की तरह भी बन सकते हैं। इतने अद्भुत विलक्षण होते हैं गुरु। ऐसे सद्गुरु हम सबके जीवन की सार्थकता को हमारे जीवन में प्रतिलक्षित करते हैं। ऐसे अद्भुत गुणों के धारी गुरु को सादर नमन। मुक्ति-मंजिल प्राप्त कराने वाले गुरु को प्रणाम।

हम पुण्यशाली, भाग्यशाली है कि हमें ऐसे गुरु मिले जिन्होंने स्वयं दीपक बन कर हमारे जीवन रूप बाती को अपने ज्ञान, कृपा रूप दीपक में जगह देकर अपने आशीर्वाद का प्रकाश प्रदान किया है ताकि हम उस प्रकाश को जगत में फैला कर जैसा हमें मार्गदर्शन मिला औरों को भी पहुँचा सके अर्थात् किसी के पथ प्रदर्शक बन सकें। यही सच्चे अर्थों में हमारे गुरु-चरणों में दक्षिणा है। ऐसा महान गुरु का संयोग हमारे अनेक जन्मों के शुभ कार्यों का पुण्य है।

सुकृति बोहरा
बी.टेक, तृतीय वर्ष, विद्युत अभियांत्रिकी विभाग

सत्य

क्या है सत्य, क्या तुमने कभी ये प्रश्न किया है? और क्या सत्य सबको समान भाव से ही प्रभावित करता है? कहीं असमंजस में तो नही फस गए तुम की तुमसे क्या कहने का प्रयत्न कर रहा हूँ। एक उदाहरण से समझो। महाभारात के युद्ध के दौरान जब पांडव पक्ष ने यह अफवाह फैला दी की अश्वत्थामा मारा गया तो आचार्य द्रोण की चक्षुएं केवल एक मनुष्य को ढूढने लगी, धर्मराज युधिष्ठिर को। जब आचार्य द्रोण ने अपनी शंका दूर करने को धर्मराज से यह प्रश्न किया की हे धर्मराज, मुझे बताओ कि मेरा पुत्र अश्वत्थामा जीवित है या वीरगति को प्राप्त हो गया तो धर्मराज ने उत्तर दिया की हां अश्वत्थामा मारा गया है किंतु मनुष्य नहीं हाथी। धर्मराज ने पूरा सत्य बताया भी और नहीं भी। उन्होंने किंतु मनुष्य नहीं हाथी इतने निम्न स्वर में कहा की आचार्य द्रोण को उनके वाक्य सुनाई नहीं दिए और फल स्वरूप आचार्य ने अपने शास्त्र त्याग दिए और दृष्टद्युम्न ने उनका वध कर दिया। जिस प्रकार धर्मराज युधिष्ठिर ने धर्म की छाव में रहते हुए भी सत्य को छिपाया उसी प्रकार आज के युग में आरोप प्रत्यारोपण के घमासान के बीच मनुष्य ने सत्य को त्यागना आरंभ कर दिया है। समाज में दरार फैलती जा रही है क्योंकि सभी ने ये स्वीकार कर लिया है झूठ ही सत्य है। कोई सत्य ढूंढने और स्वीकार करने का प्रयास ही नहीं कर रहा है। हमारा समाज हमारा ही प्रतिबिंब होता है। अगर हम असत्य है तो समाज भी दूषित होगा। मेरी सलाह तो यह की हमें राजा रामचंद्र के सिद्धांतों का पालन करना चाहिए। अन्यथा मानवता का भविष्य अंधकार में जाता दिखा रहा है।

अक्षत पाठक
बी.टेक, चतुर्थ वर्ष, विद्युत अभियांत्रिकी विभाग

प्रकृति

प्रकृति के शोषण नहीं दोहन की भावना पर आधारित है वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा

भारतीय ज्ञान चिंतन इस चराचर जगत के विश्व कल्याण और सर्वभौमिक जीवन मूल्यों पर केंद्रित है, जो विकास एवं उपभोग के समीकरणों को साधते हुए तत्कालिक आवश्यकता पूर्ति के साथ भविष्य को भी दृष्टिगत रखता है। वेदों में वर्णित जीवन मूल्य समस्त मानव जाति के लिए अमूल्य धरोहर है। वेद हमें आर्थिक, नैतिक, सामाजिक, धार्मिक और राष्ट्रीय अस्मिता से जुड़ी महान शिक्षाएं देते हैं। वेद हमें बतलाते हैं कि शस्य श्यामला पृथ्वी के प्रति कृतज्ञता का भाव रखिए, उसका शोषण न करें।

जैसे गाय दुहने से पहले हम गाय को पर्याप्त पोषण देते हैं और दूध दुहते समय दो थन का दूध बछड़े के लिए छोड़ देते हैं, ठीक उसी तरह पर्यावरण से लाभ लेते समय उसका भी ध्यान रखना जरूरी है। प्रकृति का दोहन होना चाहिए ना कि शोषण।

वास्तव में भारतीय ज्ञान चिंतन में 'दोहन' शब्द का अभिप्राय, गाय के दो थन से दूध लेना तथा शेष बछड़े के लिए छोड़ देने से है। इस संदर्भ में एक व्यवहारिक संस्मरण यह है कि किसी किसान ने उदार मन दिखाते हुए चारों थन बछड़े के लिए छोड़ दिया, परिणाम यह हुआ कि उस अनुभवहीन बछड़े की मृत्यु हो गई। इसलिए चिंतन यह कहता है कि चारों थानों का उपयोग करना जहाँ शोषण है तो वहीं चारों थानों को बछड़े को दे देना भी स्वास्थ्य संगत नहीं है। अतः केवल दो थन से दूध ही सही दोहन है, और शेष थन बछड़े के लिए छोड़ने से संतुलन बना रहेगा।

इस प्रकार समग्रता में यह बात प्रकृति संतुलन में भी लागू होती है कि हमें प्रकृति का शोषण नहीं दोहन ही करना चाहिए। इस बार विश्व पर्यावरण दिवस का ध्येय वाक्य था 'एक ही पृथ्वी' जिसमें हमारी वैदिक अवधारणा वसुधैव कुटुंबकम का भाव समाहित है। 'वसुधैव कुटुंबकम' अथावा 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' एक उदात्त आदर्श वाली प्राचीन वैदिक अवधारणा प्रकृति से अधिकतम लेने के स्थान पर प्रकृति को देने की भावना पर आधारित है।

प्रकृति दोहन से उपजे पर्यावरण संकट तथा घटते जीवन मूल्यों के बीच विकास के साथ पयावरण के भौतिक, सामाजिक व सांस्कृतिक आयामों का संरक्षण और संवर्धन करना आवश्यक है। जहाँ 50 साल पहले 1972 में हुई स्टॉकहोम सम्मेलन लगभग विफल हो चुका है। 1992 के संयुक्त राष्ट के पर्यावरण एवं विकास सम्मेलन अमीर व गरीब देशों के खाँचे चढ़ चुका है। अमीर जहाँ अपना अस्तित्व बने रहने की आवश्यकता पर उपदेश दे रहे थे, वहीं गरीब विकास की मांग कर रहे थे। यह विश्व की पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी और लापरवाही को प्रदर्शित करता है।

जलवायु परिवर्तन की बात की जाए तो इससे तात्पर्य है कि समृद्धि देश ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती करें ताकि विकासशील देशों को बिना प्रदूषण विकास का मौका मिले। विकासशील देशों ने कहा कि बिना प्रदूषण फैलाए विकास सुनिश्चित करना चाहते हैं, लेकिन इसके लिए धन एवं प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की जरूरत पड़ेगी।

मनुष्य ने आधुनिक दौर में विकास के जो तौर तरीके अपनाए हैं, उनसे प्रकृति को नुकसान ही पहुंचा है। और जीवन के लिए आवश्यक संसाधन या तो नष्ट हुए हैं या प्रदूषित आज हालात यह है कि कई प्रजातियां विलुप्ती के कगार पर हैं, और जलवायु परिवर्तन के रफ्तार लगातार जारी हैं।

अतः मानव जाति के उज्वल भविष्य और पृथ्वी के संरक्षण के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि इस पर पाए जाने वाले प्राकृतिक संसाधनों का सन्तुलन न बिगड़े। पृथ्वी से ही नाना प्रकार के फल-फूल औषधियाँ, अनाज, पेड़-पौधे आदि उत्पन्न होते हैं तथा पृथ्वी तल के नीचे बहुमूल्य धातुओं एवं जल का अक्षय भण्डार है। अतः इसका संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है ताकि पृथ्वी के ऊपर जीव-जगत सदैव फलता-फूलता रहे। ऋग्वेद में भी बताया गया है कि यह पृथ्वीलोक, अन्तरिक्ष, वनस्पतियाँ, रस तथा जल एक बार ही उत्पन्न होता है, बार-बार नहीं, अतः इसका संरक्षण आवश्यक है।

बीरेन्द्र कुमार पाण्डेय, केन्द्रीय पुस्तकालय

प्रेम और स्त्री

एक स्त्री जब व्यथित होती है तो उसे लगता है कि उसका हमसफर, उसका प्रेम उसे सुन नहीं पाएगा, समझ नहीं पाएगा। क्योंकि उसे हमेशा से उलाहना मिली अधिक प्रेम करने की वजह से। स्त्री ने हमेशा चाहा कि जितना हो सके वो जोड़कर रखे अपने परिवार को, अपने से जुड़े रिश्तों को, अपने हर सम्बन्ध को मजबूत बनाए रखें।

लेकिन इसके बावजूद वो विफल रहती है, एक नहीं हज़ारों बार। उसकी हर कोशिश नाकाम रहती है। फिर उसे ख्याल आता है कि शायद प्रेम और भविष्य के दोराहे पर काश वो भविष्य को चुन लेती तो आज अपने मन से इस तरह नहीं लड़ रही होती। उसकी व्यथा को सुनने वाला, गर्म समझने वाला भले कोई उसका साकार प्रेम भले ही ना होता लेकिन अंतर्मन की पीड़ा से आजाद तो रहती।

बस अश्कों में धो डाला
मोहब्बत का लगा हुआ दाग
अब सपनों से हँसी है, और हँसी से जिंदगी ....

स्त्री की हर पीड़ा का उन्मूलन होगा भी या नहीं ये केवल उसके बड़े सपनों और ऊँची उड़ानों की शत प्रतिशत कामयाबी पर ही निर्भर करता है।

फिर उसके मन में केवल यही गुंजायमान होता है बार बार कि -

''अगर तुम मेरे मौन को नहीं समझ पाए,
तो मेरे शोर को कभी नहीं समझ पाओगे।''

अगर उसने जो सपने अपने बच्चों के लिए, अपने परिवार के लिए देखे, और वो पूरे हो गए तो वह अपने फैसले पर नाज़ करती है कि उसने भविष्य को तरजीह दी लेकिन अगर वो कहीं पर अपने आपको कोसने और विफलता के मोड़ पर खड़ी पाती है तो उसे सच में पछतावा होता है प्रेम को चुनने का क्योंकि सफल और आनंद पूर्ण जीवन ही तो प्रेम की कसौटी होनी चाहिए ना, जो कि उसे दिखती नहीं। अगर चुनने की बारी आई, प्रेम और भविष्य में से। तो बेशक वो केवल भविष्य चुनेगी क्योंकि निरर्थक है प्रेम की बातें और अर्थ पूर्ण लगता है भविष्य उसे। शायद इसलिए कि हर कदम पर तिलांजलि मिली प्रेम से और भविष्य की फिक्र ने उसे सपने देखना और उड़ना सिखाया है।

-नेमीचंद मावरी 'निमय'- शोधार्थी
रसायन शास्त्र विभाग

मुझको प्रकाश दो

**मुझको प्रकाश दो आस्था के आँगन में
हर खुशी का आस दो मुझको प्रकाश दो
मुझको प्रकाश दो अन्धकार तिरता हुआ
रोशनी के लहरों पर डूबता है डूब जाये
ऐसा एहसास दो मुझको प्रकाश दो
प्रणय गन्ध बन्ध बने महक उठे सारा चमन
प्रेरणा का पुष्प खिले ऐसा मधुमास दो
मुझको प्रकाश दो दीप जले शान्ति तले
सत्य का प्रकाश हो नित्य नये पर्व का
सबको आभास दो मुझको प्रकाश दो
धरती जो तन बने तो मन भी आकाश हो
दुर्गुणों से दूर कर प्रीत का विश्वास दो
मुझको प्रकाश दो**

- प्रबुध मौर्य
बी.टेक, विद्युत अभियांत्रिकी विभाग

ग़ज़ल

मिलता नहीं है कोई जो मिल कर न दूर हो
ऐसा कहाँ से लाएं कि जिस पर ग़ुरूर हो
हर दम यही बताती रही है ये ज़िन्दगी
ख़ुशियों की आरजू है तो बे-आरजू रहो
खुश थे अलग-अलग वो सो बिछड़े ख़ुशी ख़ुशी
ये ही नहीं ज़रूरी किसी का कसूर हो
पहले मैं चाहता था फ़कत लौट आए वो
पर अब मैं चाहता हूँ कि तन्हाई दूर हो
बस एक दो दरारें ही तो दिल पे आईं हैं
वो इश्क़ कैसा इश्क़ अगर दिल न चूर हो

मनुराज वार्ष्णेय
बी.टेक, चतुर्थ वर्ष विद्युत अभियांत्रिकी विभाग

स्वस्थ्य जीवन

''स्वस्थ्य जीवन'' इंसान के लिए सबसे बड़ी नियामत है। इस हेतु जितना महत्व शुद्ध व पौष्टिक भोजन का है, उतना ही महत्व सात्विक व नैतिक विचारों का भी है। क्योंकि ये सात्विक व नैतिक विचारों का भी है।

क्योंकि ये सात्विक व नैतिक विचार ही हमें बेहतर निर्णय का हुनर देते हैं। अतः जिस तरह इंसान को पेट की भूख के लिए संतुलित भोजन की आवश्यकता होती है उसी अनुपात में आत्मा की भूख रचनात्मक विचारों से संतुष्ट होती है वैसे ही अस्वस्थ होने लगते हैं।

बहरहाल, आधुनिक युग में हमारी जीभ के स्वाद व मन के स्वार्थ ने मानव जीवन को लहूलुहान कर रखा है। अतः बेहतर जीवन हेतु एक और जहाँ हमें संयम के साथ संतुलित भोजन पर ध्यान देने की जरूरत है वहीं दूसरी ओर अपनी आत्मा में उठने वाले विचारों को भी नियंत्रित करते हमें स्वकल्याण के बजाय परकल्याण की भावना को आत्मसात करना होगा।

क्योंकि परकल्याण से मिलने वाली संतुष्टि वह टॉनिक है जो हर बीमारी से लड़ने की हमें अद्भुत शक्ति देती है।

- महेश स्वामी

सूरज

**अभी डूबा नहीं हूँ सूरज सा जल उठूँगा
ऐ जिंदगी तू इंतजार कर तुझे फिर मिलूंगा
ओर यूं तो बहुत आए राहगीर इस रास्ते पर
लेकिन ये राहगीर इस रास्ते को दिशा बता जायेगा
मुशद कितना भी मुश्किल हो ये रास्ता पर फिर भी
मुझे मेरी मंजिल से मिलाएगा।**

आकाश झा
बी.टेक, द्वितीय वर्ष जनपद आभियांत्रिकी विभाग

शांति

शांति पर शांति से कुछ यूँ हुआ संवाद

भीतर के सभी प्रश्नों का मिल गया जवाब। मैंने उससे पूछा- कौन हो तुम कहाँ मिलती हो? मैं तो तेरे ही मन की स्थिरता हूँ, सरलता हूँ, उसने कहा भीतर के विश्वास से उत्पन्न शिथिलता में में मिलती हूँ।

मैंने पूछा- क्या तुम वही सरलता हो, जो सुविधा क्षेत्र के अनुमानित कार्यों में मिलती है? उसने कहा नहीं-नहीं, में तो वह शांति हूँ जो सीमा क्षेत्र के बाहर कठिनाई भरे कार्य के परिणाम में मिलती है। स्फूर्तिमान सक्रियता में में हूँ, आलस्य भरी निष्क्रियता में नहीं।

मैंने पूछा- क्या तुम वही शांति हो, जो सदैव अनुकूल परिणाम आने की खुशी में मिलती है? उसने कहा नहीं-नहीं, में तो वह शांति हूँ जो कार्य करने की लग्न में मिलती है। कार्य के प्रयास में में हूँ, उसके परिणाम में नहीं।

मैंने पूछा- क्या तुम वही शांति हो, जो साधारण जीवन व्यतीत करने वाले साधु-महात्माओं को ही मिलती है?

उसने कहा नहीं नहीं, में तो वह शांति हूँ जो सांसारिक जीवन जीते हुए योगी हो जाने में मिलती है। सादगीपूर्ण आचरण में में हूँ, अधम भरी पाखंडता में नहीं।

मैंने पूछा- क्या तुम वही शांति हो, जो ज्ञानी व्यक्तित्व वाले पढे लिखे लोगो को ही मिलती है? उसने कहा नहीं-नहीं, में तो वह शांति हूँ जो अनंत होने के पश्चात शून्य में मिलती है।

परिपूर्ण ज्ञानी होने के बाद अज्ञानी होने में में हूँ, कहीं ज्ञान के भंडार मे नहीं। मैंने पूछा- क्या तुम वही शांति हो, जो मंदिरों में, एकांत में रहकर पूजा-तपस्या से मिलती है? उसने कहा नहीं-नहीं, में तो वह शांति हूँ जो नित्य किए कार्यों के आनंद में मिलती है। कर्तव्य को स्वीकारने में में हूँ पलायन मे नहीं।

तो मैंने पूछा- क्या यह रहस्यमयी पहेली सुलझेगी नहीं, क्या शांति मुझे मिलेगी नहीं? उसने कहा तू छोड लघु-विराट रूप कुरूप के भेद, झांक अपने भीतर कहीं, महसूस कर वो निश्छल प्रेम व समानता सम्पन्न भाव वहीं। तभी सुलझेगी यह पहेली, महक उठेगा मन मिलेगी, कड़ी धूप मे भी घने पेड़ की छावं सी शांति यहीं।

- निश्चल सैनी
शोधार्थी, भौतिक शास्त्र विभाग

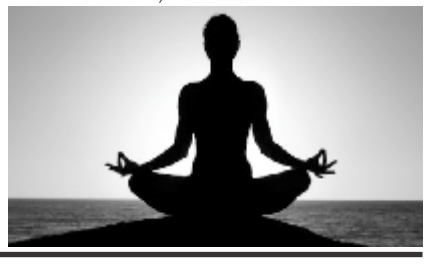

बेकसूर कैदी

बेकसूर कैदी गमले का पौधा मासूम थी, नादान था, वो दुनिया से अनजान था, बिनी वजह से वह लग रहा परेशान था। क्या था उसका कसूर उसे अभी तक समझ ना आया था आखिर उसे इस परेशानी में किसने फंसाया था।

अपनी आवश्यकता के अनुसार उन्होंने उसे अंधेरे कोने में बैठाया था, सूरज की रोशनी भी नहीं पहुंचती थी वहां उसे उन्होंने इतना सताया था 7 2 वह बोल नहीं पाता था, अपने राज को खोल नहीं पाता था, मुझे कर दो आजाद इन बेड़ियों से उसे मन ही मन सताता था 7 3 7 ना वह गाता था, ना कुछ खाता था, बस देखता जाता था।

उसे पीड़ा इतनी थी कि इन सब बातों ने उसे मन ही मन बेचैन हो जाता थ एक चारदीवारी के अंदर ही उसका बोलबाला था, फिर भी वह सबको लगता बहुत ही निराला था। सिर्फ और सिर्फ अपने मतलब के लिए लोगों ने उसे बनाया निवाला था। वह भी इस संसार के साथ मिलना चाहता था, वह भी उनके साथ वैसे ही हिला चाहता था,

पर हम ने ही उसे बहुत बुरी तरह फंसाया था, वैसे संसार उसे कहाँ सुनना चाहया था, बस लोगों को तो उसका मजाक ही बनाना आया था। 6। परंतु हमने उसे जड़ बनाया था, अब हम उसे कहतें हैं कि वह जीवन में हार गया,

अरे हमने उसे कब दौड़ के लिए दौड़ाया था।

प्रियंका बोहरा
शोधार्थी, भौतिक शास्त्र विभाग

छांव

उस छांव के आंगन में धूप की दरकरार थी एक बार धूप जो मिली तो आ गई बहार थी।

उस धूप के लिए कोई तो आंगन में आया होगा उस धूंप ने किसी के मन को तो भाया होगा।

एक धूप की किरण ने उसकी चेतना को जगाया था तभी तो उसे आगे बढ़ने का रास्ता समझ आया था।

अब उस आंगन में हर कोई जाना चाहता है।

हर कोई उसके साथ समय बिताना चाहता है।

उस आंगन की रौनक चारों तरफ खुशबू बिखेर रही थी जब पास से कोई भी गुजरता उसी को घेर रही थी।

सब यही सोच में थे यह बदलाव कैसे हो पाया,

क्योंकि पहले तो कभी उन्हें ऐसा कुछ नजर नहीं आया। 6। जिस छांव के आंगन में धूप की दरकरार थी एक बार धूप जो मिली आंगन में आ गई बहार थी।

प्रियंका बोहरा
शोधार्थी, भौतिक शास्त्र विभाग

बुद्धिमान बालक और राजा की कहानी

कई वर्षों पहले की बात है। युधिष्ठिर नाम का एक राजा हुआ करता था। उसे शिकार का बड़ा शौक था। एक बार वह अपने सैनिकों के साथ शिकार के लिए जंगल गया हुआ था। वो जंगल काफी घना था। शिकार की तलाश में वह जंगल में काफी अंदर तक चला गया था। तभी वहां अचानक तेज तूफान आ गया। सब तितर-बितर हो गए। जब बारिश रुकी तो राजा ने देखा कि उसके आस-पास कोई भी नहीं है। राजा अकेला था। उसके सैनिक उससे बिछड़ गए थे।

शिकार की तलाश में भटकने की वजह से राजा थक भी गया था। भूख और प्यास के मारे उसका बुरा हाल हो रहा था। तभी उसे तीन लड़के आते दिखे। राजा उनके पास गया और बोला कि भूख और प्यास के मारे मेरी जान निकल रही है। क्या मुझे कुछ खाना और पानी मिल सकता है। लड़कों ने बोला क्यों नहीं और वे भागकर अपने घर गए और राजा के लिए भोजन और पानी लेकर आए। खाना खाने के बाद राजा बहुत खुश हुआ और उसने उन लड़कों को बताया कि वह फतेहगढ़ का राजा है और तीनों ने जो उसकी मदद की उससे वह बहुत खुश है।

राजा ने तीनों लड़कों की सेवा से खुश होकर उन्हें बदले में कुछ मांगने के लिए कहा। इसपर पहले लड़के ने राजा से ढ़ेर सारा धन मांगा, ताकि वह आराम से अपना जीवन व्यतीत कर सके। इसके बाद, दूसरे लड़के ने घोड़ा और बंगले की मांग की, लेकिन तीसरे लड़के ने राजा से धन, दौलत की जगह ज्ञान मांगा। उसने बोला राजा मैं पढ़ना चाहता हूं। राजा राजी हो गया। उसने पहले लड़के को वादानुसार बहुत सारा धन दिया। दूसरे लड़के को बंगला और गोड़ा दिया और तीसरे लड़के के लिए टीचर की व्यवस्था कर दी। बहुत दिन बीतने के बाद एक दिन अचानक राजा को जंगल वाली घटना याद आई, तो उसने उन तीनों लड़कों से मिलना चाहा। उसने तीनों को खाने पर आमंत्रित किया। तीनों लड़के एक साथ आए और खाना खाने के बाद राजा ने तीनों से उनका हाल लिया। इस पर पहला लड़का दुखी होकर बोला- इतना धन पाने के बाद भी आज मैं गरीब हूं। राजा जी आपने जितना धन दिया था अब वह खत्म हो चुका है। मेरे पास कुछ नहीं बचा।

राजा ने दूसरे लड़के की तरफ देखा तो उसने कहा- आपके द्वारा दिया गया गोड़ा चोरी हो गया और बंगला बेचकर जो पैसा आया वो भी कुछ खर्च हो चुका है और बचा हुआ भी जल्द खत्म हो जएगा। हम तो फिर वहीं आ गए, जहां से चले थे। अब राजा ने तीसरे लड़के की ओर देखा। तीसरे लड़के ने बोला- राजा मैंने आपसे ज्ञान मांगा था, जो रोजाना बढ़ रहा है। इसी का नतीजा है कि मैं आज आपके दरबार में मंत्री हूं। आज मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं है। यह सुनकर दोनों युवकों को काफी अपसोस हुआ।

कहानी से सीखः इस कहानी से हमें सीख मिलती है कि ज्ञान ही सबसे बड़ी पूंजी है।

(डॉ.) दीपक कुमार
एस.जी.-।।, तकनीकी सहायक रसायन शास्त्र विभाग

शिक्षक

शिक्षक अर्थात आचार्य इस सृष्टि की सबसे सम्मानीय पदवी है दरअसल यह पदवी उन्हें समाज के लिए सबसे प्रेरक भूमिका सादा जीवन व उच्च विचार को सार्थकता प्रदान करने के लिए मिली है। चूकी एक आचार्य की शक्ति उसकी गहरी आध्यात्मिक-समझ में निहित होती है, इसलिए किसी भी स्वार्थ, लालच व दिखावे के परे वह सहज व प्रेरक जीवन जीता है। बहरहाल, एक महान आचार्य यह बात अच्छे से जानता है कि हर युवा भरपूर नैसर्गिक-प्रतिभा का धनी है।

अतः उनका काम प्रेरक-अंदाज में उस छुपी रचनात्मक प्रतिभा से युवाओं का साक्षात्कार कराते सिर्फ उत्साह से भरा एक जिम्मेदार नागरिक बनाना है। इस तरह प्रत्येक आचार्य अपने छात्र का सच्चा दोस्त व अभिभावक भी होता है, जो हर परिस्थिति में उसके जोश को बरकरार रखता है इस सारी प्रेरक प्रक्रिया की खूबसूरती यह है कि आचार्य स्वयं सदा पार्श्व में रहते युवाओं को आगे रख उनमें आत्मविश्वास भरता है।

अतः सही मायने में एक आचार्य ही देश का भविष्य निर्माता होता है, जो हर परिस्थिति में अपने दार्शनिक ज्ञान के बल पर युवाओं को सरलतापूर्वक हर क्या व क्यों का जवाब देते पूर्ण संतुष्ट करने की प्रेरक क्षमता रखता है।

- महेश स्वामी

जीवन

मैने ख्वाबों को बड़े नाज़ो से संजोया था
याद नहीं मुझको मैं
आखिर कब सोया था नम आँखे भीगी पलके
और ये गम पूछते है सब
मैं आखिरी बार दिल
खोलकर कब रोया था।
कुछ कर जाने कुछ बन
जाने की अंधी ज़िद में
ना जाने मैंने खुद को खुद से कब खोया था।
सफलता की उन
बुलंदियों को छू लेने की खातिर
मैंने आंसुओं को माला में मोतियों सा पिरोया था।
पेड़ नीम के देने लगे हैं आग कोई पूछले
इनसे इनके बीजों को किसने
और कब बोया था।

आकाश शर्मा
द्वितीय वर्ष, इलेक्ट्रिकल अभियांत्रिकी विभाग

श्वान

डॉग अर्थात श्वान जंगली नहीं बल्कि एक सामाजिक जीव है। दरअसल जहां-जहां इंसान की बसावट होगी वहां यह जीव अपनी एक अति सजग प्रहरी जैसी महत्वपूर्ण भूमिका के साथ पाया जाएगा।

श्वान धर्मराज युधिष्ठिर का विपरीत परिस्थितियों में स्वर्ग तक साथ देकर अपनी वफादारी साबित कर चुका है। बहरहाल, इंसान का सबसे वफादार दोस्त श्वान अपने अद्भुत प्रेमप्रदर्शन से क्षणभर में सारे तनावों को भगाने व दुख हरने के करिश्मे का स्वामी है इसी करिश्मे के कारण श्वान विदेशों में तो हर घर का स्थाई सदस्य है जबकि हमारे यहां इंसान की असंवेदनशीलता व उपेक्षित व्यवहार के चलते इस सजग प्रहरी जीव की भरी गर्मियों में भूख-प्यास से मरने तक की नौबत आ रही है। अतः भूख के कारण एक रोटी-टुकड़े के लिए आपस में लड़ते इन बेजुबानो का पागल होने का खतरा भी बढ़ रहा है ऐसे में हम इन बिन झोली के साधुओं को रोटी-पानी की भिक्षा दान देते जीव दया भरे आनंद को अनुभूत कर, एक संतोष-भरा जीवन जी सकते हैं ।

- महेश स्वामी

भारतीय संस्कृति

गंगा-यमुना लहजीब है, हमारी संस्कृति।
रोशन सी दिवाली है, मिठी- सी ईद है...
उत्साह से भरपूर है, हमारी संस्कृति।
विभिन्न विचारधाराओं को समेटे है,
भारतीयता को सहेजे है ...
महानतम् में महान है, हमारी संस्कृति।
तर्क भी है, इसमें ज्ञान व विज्ञान भी है...
लफ्जों की मोहताज नहीं है, हमारी
संस्कृति।
मजहब के नाम पर फिर क्यूं लड़े हम...
जबकि ''सहिष्णुता'' से भरपूर है, हमारी
संस्कृति।
''वसुदेव कुटुम्बकम'' पर आधारित है
भारतीय संस्कृति।

- पंकज यादव
(द्वितीय वर्ष, एम.टेक.)

प्रकृति के शोषण नहीं दोहन की भावना पर आधारित है वसुधैव कुटुंबकम की अवधारणा

भारतीय ज्ञान चिंतन इस चराचर जगत के विश्व कल्याण और सार्वभौमिक जीवन मूल्यों पर केंद्रित है, जो विकास एवं उपभोग के समीकरणों को साधते हुए तत्कालिक आवश्यकता पूर्ति के साथ भविष्य को भी दृष्टिगत रखता है। वेदों में वर्णित जीवन मूल्य समस्त मानव जाति के लिए अमूल्य धरोहर है। वेद हमें आर्थिक, नैतिक, सामाजिक, धार्मिक और राष्ट्रीय अस्मिता से जुड़ी महान शिक्षाएं देते हैं। वेद हमें बतलाते हैं कि शस्य श्यामला पृथ्वी के प्रति कृतज्ञता का भाव रखिए, उसका शोषण न करें।

जैसे गाय दुहने से पहले हम गाय को पर्याप्त पोषण देते हैं और दूध दुहते समय दो थन का दूध बछ? के लिए छो? देते हैं, ठीक उसी तरह पर्यावरण से लाभ लेते समय उसका भी ध्यान रखना जरूरी है। प्रकृति का दोहन होना चाहिए ना कि शोषण।

वास्तव में , भारतीय ज्ञान चिंतन में %दोहन% शब्द का अभिप्राय, गाय के दो थन से दूध लेना तथा शेष बछड़े के लिए छोड़ देने से है। इस संदर्भ में एक व्यवहारिक संस्मरण यह है कि किसी किसान ने उदार मन दिखाते हुए चारों थन बछड़े के लिए छोड़ दिया, परिणाम यह हुआ कि उस अनुभवहीन बछड़े की मृत्यु हो गई। इसलिए चिंतन यह कहता है कि चारों थानों का उपयोग करना जहां शोषण है तो वहीं चारों थानों को बछड़े को दे देना भी स्वास्थ्य संगत नहीं है। अतः केवल दो थन से दूध लेना ही सही दोहन है, और शेष थन बछड़े के लिए छोड़ने से संतुलन बना रहेगा।

इस प्रकार समग्रता में यह बात प्रकृति संतुलन में भी लागू होती है कि हमें प्रकृति का शोषण नहीं दोहन ही करना चाहिए। इस बार विश्व पर्यावरण दिवस का ध्येय वाक्य था %एक ही पृथ्वी%, जिसमें हमारी वैदिक अवधारणा वसुधैव कुटुंबकम का भाव समाहित है। वसुधैव कुटुंबकम अथवा माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः एक उदात्त आदर्श वाली प्राचीन वैदिक अवधारणा प्रकृति से अधिकतम लेने के स्थान पर प्रकृति को देने की भावना पर आधारित है।

प्रकृति दोहन से उपजे पर्यावरण संकट तथा घटते जीवन मूल्यों के बीच विकास के साथ पर्यावरण के भौतिक, सामाजिक व सांस्कृतिक आयामों का संरक्षण और संवर्धन करना आवश्यक है। जहाँ 50 साल पहले 1972 में हुई स्टॉकहोम सम्मेलन लगभग विफल हो चुका है, 1992 के संयुक्त राष्ट्र के पर्यावरण एवं विकास सम्मेलन, अमीर व गरीब देशों के खाँचे का भेंट च? चुका है। अमीर जहां अपना अस्तित्व बने रहने की आवश्यकता पर उपदेश दे रहे थे, वहीं गरीब विकास की मांग कर रहे थे। यह विश्व की पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी और लापरवाही को प्रदर्शित करता है।

जलवायु परिवर्तन की बात की जाए तो इससे तात्पर्य है की समृद्धि देश ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती करें ताकि विकासशील देशों को बिना प्रदूषण विकास का मौका मिले। विकासशील देशों ने कहा कि बिना प्रदूषण फैलाए विकास सुनिश्चित करना चाहते हैं, लेकिन इसके लिए धन एवं प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की जरूरत पड़ेगी।

मनुष्य ने आधुनिक दौर में विकास के जो तौर-तरीके अपनाए हैं, उनसे प्रकृति को नुकसान ही पहुंचा है। और जीवन के लिए आवश्यक संसाधन या तो नष्ट हुए हैं या प्रदूषित। आज हालात यह है कि कई प्रजातियां विलुप्ती के कगार पर हैं, और जलवायु परिवर्तन के रफ्तार लगातार जारी हैं।

अतः मानव जाति के उज्वल भविष्य और पृथ्वी के संरक्षण के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि इस पर पाए जाने वाले प्राकृतिक संसाधनों का सन्तुलन न बिगड़े। पृथ्वी से ही नाना प्रकार के फल-फूल, औषधियाँ, अनाज, पेड़-पौधे आदि उत्पन्न होते हैं तथा पृथ्वी-तल के नीचे बहुमूल्य धातुओं एवं जल का अक्षय भण्डार है। अतः इसका संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है ताकि पृथ्वी के ऊपर जीव-जगत सदैव फलता-फूलता रहे। ऋग्वेद में भी बताया गया है कि यह पृथ्वीलोक, अन्तरिक्ष, वनस्पतियाँ, रस तथा जल एक बार ही उत्पन्न होता है, बार-बार नहीं, अतः इसका संरक्षण आवश्यक है।

बीरेंद्र पाण्डेय
केन्द्रीय पुस्तकालय

जीवन और नेतृत्व

करुणा और सौहार्द

प्रायः अधिकांश मालिक अपने नौकरों के प्रति उदासीन और कहीं-कहीं क्रूर दिखाई पड़े और कहीं तो नौकर ही मालिक बन बैठे हैं। पर यहाँ स्वामी और नौकर का अद्भूत ही रूप देखा।

मालवीयजी के सुपुत्र गोविन्दजी ने एक बार डॉक्टर आनन्द कृष्ण को एक साधारण पड़ोसी के प्रति मालवीयजी के सौहार्द्र और करुणा की एक अद्भूत बात बतायी। गोविन्दजी ने बताया कि जब मालवीयजी भारती भवन में रह कर ही वकालत करते थे, तब एक सज्जन जो बगल में रहते थे अपना मकान बेचने के लिए मालवीयजी के पास आये। पर उन्होंने मकान खरीदने के बजाय उसे कुछ रुपये उधार दे दिये। व्यापार में अधिक घाटा हो जाने के कारण उस पड़ोसी को अपना मकान मालवीयजी के हाथ बेचना ही पड़ा। फिर भी मालवीय जी ने उस मकान पर अपना अधिकार न जमा कर उसे उसके पुराने मालिक के कब्जे में रहने दिया। पर पड़ोसी को यह बात ठीक नहीं लगी। उसने मकान खाली करके मालवीयजी को उसका कब्जा देने की ठान ली। उसके आग्रह पर कब्जे की तिथि निश्चित हो गयी। तब मालवीयजी की धर्मपत्नी मकान देखने गयीं। वहाँ उन्होंने देखा कि एक स्त्री सामान बांधती जा रही है। साथ-साथ रोती भी जा रही है। रोने का कारण पूछने पर उसने बताया कि ''बहिन, अपना घर है, छोड़ते दुःख होता है। जब धर्मपत्नी जी ने मालवीयजी से इसकी चर्चा की, तब उन्होंने मकान के पुराने मालिक को बुलाकर कहा कि तुम्हारा मकान तुम्हारे पास ही रहेगा। इस पर उसने इनकार किया, पर मालवीयजी टस से मस नहीं हुए और मकान उसके पास ही बना रहा।''

मालवीय जी की करुणा नौकरों और पड़ोसियों तक ही सीमित नहीं थी। सभी गरीब समान रूप से उसके अधिकारी थे। उनके घर पर दीन-दुःखियों की भीड़ सी लगी रहती थी। उन सबके लिए उनका दरबार सदा खुला रहता था। उन्हें उनके पास आने से कौन रोक सकता था? यदि उनका कोई पुत्र रोकने का प्रयत्न करता, तो वे कहते कि जब तक वे इस घर में हैं, तब तक तो दीन-दुःखी इस घर में आयेंगे ही। यदि बाबू शिवप्रसाद गुप्त कमरे पर पहरा लगा देते या स्वयं पहरा देने लगते, तो मालवीयजी पेड़ के नीचे जाकर बैठ जाते, और वहां सबसे मिलने लगते। आखिर इन सब पहरेदारों को हार माननी पड़ती। ऐसा लगता था मानों उन्होंने गजेन्द्रमोक्ष की कथा को अपने जीवन में पूरे तौर पर चरितार्थ कर लिया था। यदि उनके सामने कोई असहाय संकट उपस्थित होता, तो वह गजेन्द्र की तरह विलाप करते हुए उससे छुटकारे के लिए भगवान् से प्रार्थना करते, और वे स्वयं कृष्ण की तरह दुःखियों के कष्टों को दूर करने के लिए दौड़ते फिरते। उनका सारा जीवन इस प्रकार की घटनाओं से भरा पड़ा है।

बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन ने अपने संस्मरण में लिखा है कि ''प्रयाग में गंगा तट पर माघ का मेला था। कड़ाके की सर्दी थी। रात का समय था। पानी बरसने वाला था। जिसके कारण बहुत से साधनहीन यात्रियों को बड़ा कष्ट होने की सम्भावना थी। बस, मालवीय जी टण्डनजी को लेकर टाल पर पहुँचे, लकड़ियाँ खरीदी, कुछ उन्होंने अपने कन्धे पर रखी और अपने दूसरे साथियों की सहायता से बहुत सी लकड़ियाँ मेले में ले जाकर वे साधुओं के यहाँ गरीबों के यहाँ, जिनके पास सहारा नहीं था, उनको बाँटने लगे। इसी तरह एक दूसरे अवसर पर माघ मेले में ही जैसे ही मालवीयजी खाना खाने बैठे थे कि उन्हें मेले में आग लगती दिखाई दी। वह तुरत ही धोती पहने ही आग बुझाने दौड़ पड़े। इस भावना से अनुप्राणित मालवीय जी सन् १९११ में पंजाब हत्याकाण्ड के तुरंत बाद पंजाब गये और वहाँ उन्होंने कई मास दुःखी जनता की सेवा की, उन्हें ढाडस बँधाया, साहस प्रदान किया।

स्वामी श्रद्धानन्दजी ने अपने संस्मरण में लिखा कि सन् १९१९ में अमृतसर कांग्रेस के अवसर पर एक दिन इतनी वर्षा हुई कि प्रतिनिधियों को तम्बुओं में नहीं टिकाया जा सका। उनका प्रबन्ध नगर निवासियों के घरों में करना पड़ता और उन्हें स्टेशन से घरों में पहुँचाते पहुँचाते दो बज गये। इस अवसर पर रेलवे पर हमारे विनम्र और सीधे सादे नेता पण्डित मदन मोहन मालवीय बराबर बने रहे, भूखप्यास की चिन्ता न कर एक घोड़े की तरह उस समय तक काम करते रहे, जब तक कि अन्तिम मेहमान भी अपने नियत स्थल पर रवाना नहीं हो गया।

उच्चकोटि के वक्ता

मालवीयजी ''अद्वितीय वक्ता'' थे। उनके भाषणों में जैसा कि सच्चिदानन्द सिन्हा ने बताया ''अनमोल वाक्शक्ति के साथ-साथ प्रभावकारी माधुर्य और गम्भीरता का अनुपम सम्मिश्रण रहता था'' वे सदा व्यक्तिगत कटाक्ष से निर्मुक्त तथा युक्तियुक्त विचारों, सद्भावनाओं और सदादर्शों से परिपूर्ण होते थे। ऐतिहासिक तथ्यों औश्र प्रमाणों से परिपुष्ट, तथा साहस और सौजन्य, विवेक और मनुष्यता, करुणा और शौर्य एवं युक्तियुक्त तर्क और भाषा की पवित्रता से अलंकृत उनके बहुत से भाषण वाग्मिता के उच्च उदाहरण थे। अंग-विक्षेप के बिना घंटों धारा-प्रवाह के साथ भावनाओं से परिपूर्ण प्रभावशाली भाषण देते रहना मालवीयजी की वाग्मिता का विलक्षण गुण था। उनकी आकर्षक आकृति, उनका शील और सुमधुर स्वर, उनकी निर्भिकता ओर स्पष्टवादिता, उनका देशप्रेम, सत्य के प्रति उनकी दृढ़ निष्ठा, एवं उनकी निष्कपट भावुकता सोने पर सुहागे का काम करती थी, उनकी वाक्पटुता को चमत्कृत कर देती थी। उन्होंने अपने लम्बे सार्वजनिक जीवन में अपनी वाक्शक्ति को कभी भी अपने सार्वजनिक प्रतिद्वन्द्वियों की वैयक्तिक निन्दा में नहीं लगाया। प्रभावशाली व्याख्यान द्वारा प्रतिद्वन्द्वयों की वैयक्तिक निन्दा में नहीं लगाया। प्रभावशाली व्याख्यान द्वारा प्रतिद्वन्द्वी के यश और कीर्ति को मिट्टी में मिला देने की बात उन्होंने कभी सोची ही नहीं। हालिकर नीतियों और कार्यों की निर्भिक और कड़ी आलोचना के साथ ही साथ सबके प्रति सद्भावना तथा सौहार्दवृद्धि की कामना उनकी वाग्मिता का लक्षण था। उनके मुख से दूसरों के लिए सदा मिठास टपकती थी। सन् १८८६ में पच्चीस वर्ष की आयु में कांग्रेस के दूसरे अधिवेशन में प्रतिनिधि प्रथा के पक्ष में दिया गया उनका भाषण निःसन्देह उच्चकोटि की वाग्मिता का उद्यतम उदाहरण है। इसी तरह जैसा कि डॉक्टर सच्चिदानन्द सिन्हा ने कहा है, पंजाब हत्याकाण्ड के सम्बन्ध में दिये गये मालवीयजी के भाषण वास्तव में बहुत ही उच्चकोटि की विवेचना शक्ति के उत्कृष्ट उदाहरण है। श्री एन.सी. केलकर ने जो मालवीयजी के साथ सन् १९२४ से सन् १९३० तक केन्द्रीय असेम्बली के सदस्य थे, ठीक ही कहा है कि वाग्मिता और वाक्पटुता में वह (मालवीयजी) कभी-कभी उस ऊँचाई पर पहुँच जाते थे जिसकी असेम्बली का कोई दूसरा सदस्य आकांक्षा भी नहीं कर सकता था। फिर भी यद्यपि जनता उनके लम्बे भाषणों को भी बहुत उत्सुकता से सुनती थी, सुविज्ञ राजनीतिज्ञों की सभा में सुपरिचित बातों का विस्तृत विश्लेषण उनकी वाक्पटुता की गम्भीरता को कम कर देता था।

सद्भावना

लोक-सेवा में संलग्न सहयोगियों के प्रति सद्भावना तथा विश्वासपूर्ण व्यवहार उनके चरित्र का विशिष्ट सद्गुण था। वे सदा उनकी प्रतिष्ठा का ध्यान रखते थे। और उनके व्यवहार या व्यक्तित्व की कड़ी आलोचना उन्हें व्यथित करती थी। वे गोपनीय विचार विमर्श को गुप्त रखना मानव का पुनीत कर्तव्य, तथा विश्वासघात उसका घोर अपराध मानते थे। यों तो उनका सारा सार्वजनिक जीवन ही इस सद्भावना और विश्वासपूर्ण व्यवहार का उच्चतम उदाहरण है, पर कुछ परिस्थितियों और अवसरों पर उनके व्यवहार उसकी उच्चता और श्रेष्ठता के निःसन्देह अत्युतम दृष्टान्त हैं। वंगभंग के जमाने में हिन्दू बोर्डिंग हाउस के बहुत से प्रबन्धक एक विद्यार्थी के उग्र राष्ट्रवादी व्यवहार से इतने असन्तुष्ट थे कि वे उसे बोर्डिंग हाउस से जहाँ वह रहता था निकाल देना चाहते थे। मालवीयजी इसे ठीक नहीं समझते थे। पर बहुमत से बात तय हो गयी, और वह विद्यार्थी बोर्डिंग हाउस से निष्कासित कर दिया गया। मालवीयजी को यह बात इतनी बुरी लगी कि उन्होंने कहा कि ऐसे विद्यार्थियों के लिए उन्हें एक विश्वविद्यालय बनाना होगा। पर उस समय भी जबकि वह विद्यार्थी और उसके समर्थक इस निष्कासन के लिए मालवीयजी को ही मुख्य रूप से दोषी बताते थे, उन्होंने अन्तरंग सभा की बात को नहीं खोला, और सारी बदनामी अपने ऊपर ओढ़ ली।

जब सन् १९१० में गोखले साहब ने प्रेस विधेयक का समर्थन और मालवीयजी ने इसका विरोध किया, और इस कारण समाचारपत्रों ने मालवीयजी की बहुत प्रशंसा और गोखले साहब की भर्त्सना की, तब मालवीयजी बहुत दुःखी थे। उन्होंने बहुत सी वेदना के साथ मुंशी ईश्वरशरण से कहा गोखले कायर है और मैं बहादुर हूँ- यह कहा जा रहा है। कितने परिताप की बात है। यह हृदय विदारक बात है। इसी तरह जब सन् १९२२ में देश के बहुत से नेता गाँधीजी की आलोचना कर रहे थे कि उन्होंने सरकार से समझौता नहीं किया, मालवीयजी चुप रहे और जब बात बढ़ जाने पर उन्होंने वक्तव्य दिया, तब अपने प्रयास की विफलता का रोना रोने के बजाय और उसके लिए गाँधी जी को दोषी ठहराने के बजाय उनकी कठिनाईयों की ओर ही संकेत किया।

मालवीयजी का सारा जीवन संघर्ष करते गुजरा। पर उन्होंने कभी किसी का अनहित नहीं चाहा। एक बार उनके सम्बन्धी ब्रजमोहनजी व्यास ने उनसे कहा कि महाकवि माघ ने राजनीति की व्याख्या की है कि अपना उदय और शत्रु का नाश। यह सुनकर मालवीयजी की मुस्कान घृणा में परिवर्तित हो गयी, वह बोले, छिः टुच्ची राजनीति है। एक दूसरे अवसर पर उन्होंने व्यासजी ही को उपदेश दिया, अभ्युदय की ही कामना करना, किसी को नीचा दिखलाने की नहीं।

(डॉ.) ज्योति जोशी

हमारे प्रश्न भक्ति वेदांत स्वामी प्रभुपाद के उत्तर

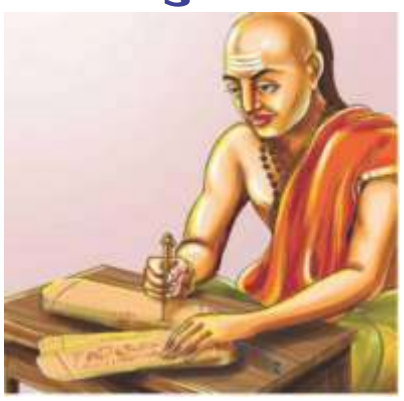

1. डॉ. सिंहः यदि मनुष्य को मुक्ति नहीं मिलती तो क्या उसे पुनः मानव शरीर पाने के पूर्व सभी चौरासी लाख योनियाँ में से गुजरना पड़ता है।

श्रील प्रभुपादः नहीं, प्रकृति के नियमानुसार जीवन की निम्न योनियों में ही जीवात्मा सीढ़ी प्रति सीढ़ी प्रगति करता है। मनुष्य की योनि में जीव को विवेकपूर्ण उन्नत चेतना के स्तर पर उन्नत है, तो वह कुत्ते या बिल्ली का शरीर नहीं पायेगा। उसे दूसरा मानव शरीर मिलेगा।

प्राप्य पुण्य कृतां लोकानुषित्वा शाश्वतौः समाः।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते।।

योगभ्रष्टः शब्द एक ऐसे व्यक्ति की ओर संकेत करता हैं, जो योग का अभ्यास कर रहा था, किन्तु किसी कारणवश उसे पूर्ण सफलता नहीं मिली। यहाँ क्रमिक विकास का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। उसे पुनः मानव शरीर प्राप्त होता है। वह कुत्ते या बिल्ली का शरीर नहीं पाता। जैसा कि हम अपार्टमेंट के बारे में चर्चा कर रहे थे कि यदि आप अधिक पैसा चुका सकते हैं तो आपको बेहतर अपार्टमेंट रहने को मिल जायेगा। आपको पहले निम्न स्तर के अपार्टमेंट में नहीं रहना पड़ेगा।

2. डॉ. सिंह : क्या हम लोग जीवित की परिभाषा चेतना युक्त और मृत की परिभाषा चेतना रहित कर सकते हैं?

श्रील प्रभुपादः हाँ, यही अन्तर है जैसा कि कृष्ण भगवत्गीता (2.17) में कहते हैं - ''अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्।।'' जो सारे शरीर में व्याप्त है वह अविनाशी है कोई भी व्यक्ति समझ सकता है कि सारे जीवित शरीर में क्या फैला हुआ है- यह है चेतना। मृत्यु के समय हमारी चेतना के अनुसार हमें एक विशेष आकार का शरीर प्रदान किया जाता है। यदि आपके भीतर कुत्ते की चेतना है, तो आपको कुत्ते का शरीर मिलेगा और यदि आप में ईश्वर सम्बन्धी चेतना है, तो आपको देव शरीर प्राप्त होगा। कृष्ण प्रत्येक व्यक्ति को यह स्वतंत्रता देते हैं कि वह जिस प्रकार का शरीर चाहे, चुन लें।

यान्ति देवव्रता देवान्पितन्यान्ति पितवताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति
मद्याजिनोऽपि माम।।

अर्थात् देवताओं को पूजने वाले देवताओं का शरीर प्राप्त करते हैं, पितरों को पूजने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं, भूतों को पूजने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं और मेरा पूजन करने वाले भक्त मुझे ही प्राप्त होते हैं। (गीता 1.25)

(डॉ.) ज्योति जोशी

गुलशन

हे गुलशन गुलाबों का दीदार करने वालों,
कभी काँटों का भी रूख कर लिया करो।
माना फूलों सा सौन्दर्य नहीं हम में,
नुकीली चुभन है।
बगिया की शान नहीं,
पर रेगिस्तान का गुरूर है।
कोयल की चहचहाट नहीं नसीबों में,
सर्प विष और गिद्धों का आवेश है।
अक्सर फूल भ्रमित कर जाते हैं,
अपनी आभा से।
हम तो तटस्थ थे,
इस दोगले संसार में।
फूलों से कोमल नहीं हम,
सख्त कठोर और कंटीले हैं।
फूल ढूँढा करते हैं, पनाह गर्मी के आवेग में,
हम तो तरलता के स्रोत हैं, इस तपों संसार में
जिनके बचाव में,
करते सर्वस्व अपना न्यौछावर हैं।
फिर भी ठुकरा दिए जाते हैं।
इस निर्मम संसार में,
हे गुलशन गुलाबों का दीदार करने वालों
कभी काँटों का भी रूख कर लिया करो।

कपिल जैन
द्वितीय वर्ष बी.टेक., धातुकी अभियांत्रिकी विभाग

श्रद्धांजलि

कितना किस्मत वाला हूँ मैं
कि मुझे एक नहीं बल्कि दो
माँ का प्यार मिला,
एक माँ जिसने मुझे पाला और
देश की सेवा करने के काबिल बनाया
और दूसरी माँ जिसने मुझे उस समय अपनी
गोद में सुलाया,
जब मैं दुश्मनों को हरा कर,
अपने सीने में लगी हुई उस बंदूक की गोली
के दर्द से तड़प कर अपनी माँ का नाम ले रहा
था। लगता था कि मैं कितना बदनसीब हूँ,
रक्षाबंधन जैसे पवित्र त्यौहार में मेरी
बहन के द्वारा भेजी गई राखी
मुझ तक नहीं पहुँच पाई
लेकिन जब अपने कैंप से बाहर आया
तो मेरा मन यह देखकर पसीज गया
कि हमारी रक्षा के लिए देश के कोने- कोने
से हमारे लिए अनागिनत दुआएं आई है
(राखी के रूप में)
और तब लगा कितना किस्मत वाला हूँ
कि एक नहीं बल्कि मेरी हज़ारों
बहने है जो हमारी रहता की दुआएँ मांगती है।
लगता था कि कितना बदनसीब हूँ
घर वालों से कभी
तीन हफ्तों तक बात नहीं हो पाती तब लगता
था कि अच्छा ही
इस संवेदनशील माहौल में बात न ही हो तो अच्छा
है।
क्योंकि अपनी बेटी के
फोन में पूछे गए।
एक प्रश्न का मेरे पास जवाब नहीं,
कि मैं उससे मिलने घर कब जाऊँगा।

मालविका बिश्ट
स्नात्ताकोत्तर द्वितीय वर्ष, रसायन शास्त्र विभाग

दिव्य नेत्र

अनुयायीः गत डेढ़ सौ वर्षों से पश्चिमी अध्यात्मवादियों के सम्मुख तर्क और विश्वास के बीच सम्बंध स्थापित करने की समस्या ही प्रमुख रही है। वे तर्क के बल पर विश्वास को समझने का प्रयत्न करते हैं, किन्तु वे तार्किक योग्यताओं एवं विश्वास के बीच संबंध स्थापित करने में असफल रहे हैं। उनमें से कुछ का भगवान् में विश्वास है, किन्तु उनके तर्क उन्हें बतलाते हैं कि ईश्वर नहीं है। उदाहरणार्थ, वे कहेंगे कि जब हम भगवान् को प्रसाद चढ़ाते हैं, तब केवल यह विश्वास किया जाता है कि भगवान् उसे स्वीकार करते हैं क्योंकि हम उन्हें देख नहीं सकते।

श्रील प्रभुपाद : वे लोग भगवान् को नहीं देख सकतें, किन्तु मैं उन्हें (भगवान् को) देख सकता हूँ। मैं भगवान् को देखता हूँ, और इसीलिए मैं उन्हें भोग लगाता हूँ। चूँकि वे उन्हें नहीं देख सकते, अतः वे मेरे पास आएँ जिससे कि मैं उनकी आँखे खोल सकूँ। वे लोग अंधे हैं- मोतियाबिंद से पीड़ित हैं- इसलिए मैं उनकी शल्य क्रिया करूँगा और वे देखने लगेंगे। यही हमारा कार्यक्रम हैं।

अनुयायी : वैज्ञानिक कहते हैं कि जो कुछ वे अपनी इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण कर सकते हैं, वही उनकी इन्द्रियग्राहिता का सामान्य आधार है।

श्रील प्रभुपादः हाँ, वे वस्तुओं को अपनी इन्द्रियों के द्वारा अनुभव कर सकते हैं, किन्तु बड़े अपूर्ण ढंग से। वे लोग रेत को अपनी इन्द्रियों के द्वारा देख सकते हैं, किन्तु क्या वे लोग देख सकते हैं कि रेत किसने बनाई? यह रेत है और यह सागर के उद्गम को स्पष्टतया कैसे देख सकता हैं।

अनुयायी : वैज्ञानिक कहते हैं कि यदि रेत और सागर भगवान् के द्वारा निर्मित होते तब हम उन्हें (भगवान् को) देखने में समर्थ हो गए होते, ठीक उसी तरह जैसे हम रेत और सागर को देख सकते हैं।

श्रील प्रभुपाद : हाँ, वे लोग भगवान् को देख सकते हैं, किन्तु उन्हें देखने हेतु आँखे अवश्य मिलनी चाहिए। वे लोग अंधे हैं। अतएव वे पहले मेरे पास उपचार के लिए आएं। शास्त्र कहते हैं कि व्यक्ति को गुरु के पास उपचार के लिए अवश्य जाना चाहिए, जिससे कि वह भगवान् को समझ सके। वे अंधी आँखों से भगवान् को कैसे देख सकेंगे?

अनुयायीः किन्तु भगवान् को देखना अलौकिक है वैज्ञानिक केवल लौकिक दृष्टि को ही ध्यान में रखते हैं।

श्रील प्रभुपाद : प्रत्येक वस्तु अलौकिक है। उदाहरण के लिए आप सोच सकते हैं कि साफ आकाश में कुछ भी नहीं है - अर्थात् यह खाली है- किन्तु आप के नेत्र अपूर्ण हैं। आकाश में अनगिनत नक्षत्र हैं- आप जिन्हें देख नहीं सकते क्योंकि आपके नेत्र सीमित हैं। चूँकि यह आपके वश में नहीं है कि आप उन्हें देख सकें, अतः आपको मेरे कथन को स्वीकार करना चाहिए, हाँ, वहाँ लाखों तारे हैं। क्या अंतरिक्ष इसलिए खाली है क्योंकि आप तारों को देख नहीं सकते? नहीं, आपकी इन्द्रियों की अपूर्णता ही वैसा सोचने के लिए आपको विवश करती है।

अनुयायी : वैज्ञानिक कुछ बातों से संबंधित अपने अज्ञान को स्वीकार कर लेंगे, किन्तु वे कहते हैं कि जो कुछ वे देख नहीं सकतें, उसको वे स्वीकार नहीं करेंगे।

श्रील प्रभुपादः यदि वे अज्ञानी हैं, तब उन्हें किसी अन्य से जो सत्य को जानता हैं, ज्ञान स्वीकार करना होगा।

अनुयायी : किन्तु वे कहते हैं, तब क्या होगा, यदि जो कुछ हमें बताया जाए, वह गलत निकले?

श्रील प्रभुपादः तब वह उनका दुर्भाग्य है। क्योंकि उनकी अपूर्ण इन्द्रियाँ भगवान् को देख नहीं सकती, अतः उन्हें इस संबंध में किसी अधिकारी व्यक्ति से जानना होगा। यही प्रक्रिया है। वे यदि किसी अधिकारी से संपर्क नहीं करते, वे यदि किसी धोखेबाज से संपर्क स्थापित करते है, तो वह उनका दुर्भाग्य है। किन्तु प्रक्रिया यह है कि जब कभी आपकी इन्द्रियाँ काम नहीं कर सकती, तब आपको अवश्य ही किसी अधिकारी व्यक्ति के साथ तथ्य को जानने हेतु संपर्क स्थापित करना चाहिए।

डॉ. सिंह : कठिनाई यह है कि नास्तिकों के समूह में आप ईश्वर का अस्तित्व प्रमाणित नहीं कर सकते हैं।

श्रील प्रभुपादः नास्तिक दुष्ट हैं। हम दूसरों को सिखाएँ उनको जो तर्कसंगत हैं।

प्रत्येक वस्तु किसी के द्वारा बनाई गई है: रेत किसी की बनाई हुई है। पानी किसी के द्वारा बनाया गया है और आकाश किसी के द्वारा बनाया गया है। कृष्णभावनामृत का अर्थ है, उस किसी को जानना।

डॉ. सिंहः वैज्ञानिक कहेंगे, उसे हमारे सम्मुख प्रस्तुत करो, जिससे हम उसको देख सकें।

श्रील प्रभुपादः और मैं उन लोगों को उत्तर देता हूँ, मैं आपके सम्मुख उसको प्रस्तुत करता हूँ, किन्तु साथ ही साथ आपको भी प्रशिक्षण लेना होगा। उसे देखने हेतु आपको अपनी आँखों को भी योग्य बनाना पड़ेगा। यदि आप अंधे हों, किन्तु डॉक्टर के पास नहीं जाना चाहते, तब आप अपने अंधेपन से कैसे मुक्त होंगे और देख सकेंगे? आपका उपचार होना ही चाहिए, वही निर्देश है।

अनुयायी : उसके लिए विश्वास की आवश्यकता है।

श्रील प्रभुपाद : हाँ, किन्तु अंधविश्वास नहीं- व्यावहारिक विश्वास। यदि आप कुछ सीखना चाहते हों, तब आपको अवश्य ही किसी विशेषज्ञ के पास जाना चाहिए। यह अंधविश्वास नहीं है, यह व्यावहारिक विश्वास हैं। आप अपने आप कुछ नहीं सीख सकते।

अनुयायी : यदि कोई व्यक्ति वास्तविक रूप में ईमानदार है, तो क्या वह सदैव एक प्रामाणिक गुरु से मिलेगा?

श्रील प्रभुपाद : हाँ, गुरु कृष्ण प्रसादे पाय भक्ति - लता बीज। कृष्ण आपके भीतर है और जैसे ही वे देखते हैं कि आप ईमानदार हैं, वे आपको सही व्यक्ति के पास भेज देंगे।

अनुयायी : और यदि आप पूर्णरूपेण ईमानदार नहीं है, तब आपको शिक्षक के स्थान पर एक धोखेबाज मिल जायेगा?

श्रील प्रभुपाद : हाँ, यदि आप ठगे जाना चाहते हों, तब कृष्ण आपको किसी ठग के पास भेज देंगे। कृष्ण अति बुद्धिमान हैं। यदि आप एक ठग हैं, तो भगवान् आपको भली भाँति ठगेंगे। किन्तु यदि आप सचमुच ईमानदार है, तब वह आपको सही मार्गदर्शन देंगे। भगवगीता (15.15) में कृष्ण कहते : सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च। मैं सब प्राणियों के हृदय में बैठा हूँ और मुझसे ही स्मृति, ज्ञान और विस्मृति दोनों के संबंध में बातें करते हैं यदि आप ठग हैं तो कृष्ण आपको ऐसी बुद्धि देंगे, जिससे आप उन्हें सदैव के लिए भूल जाएँ।

अनुयायी : किन्तु नास्तिक लोग हावी हैं। वे प्रभुत्व रखते हैं।

श्रील प्रभुपाद : एक सैंकड में माया की एक ठोकर से उनका सारा प्रभुत्व समाप्त हो जाता है। माया की यही प्रकृति है। नास्तिक नियंत्रण में है, किन्तु माया के कारण सोचते हैं कि वे मुक्त हैं।

मोघाश मोघ कर्माणो मोघज्ञाना विचेतरसः।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः।।

- दिव्य ज्योत जोशी
(संकलित)

विचार की शक्ति जानें

हालात की प्रतिकूलता चरम सीमा पर होने पर भी व्यक्ति यदि अच्छे विचारों की शक्ति से समृद्ध है तो वह आनंदित रह सकता है। विचार में प्रचंड शक्ति होती है।

बात वर्ष 2008 की है। पेरिस फ्रांस के एक होटल में टेक कॉन्फ्रेंस थी। दो अमेरिकी मित्र इसमें हिस्सा लेने पहुंचे। कॉन्फ्रेंस खत्म होने तक रात के साढ़े नौ बज चुके थे। ये दोनों मित्र होटल की गैलरी में पहुंचे तब पता चला कि भारी बर्फबारी हो रही है। मित्रों ने आसपास देखा कि लगभग 40-45 लोग टैक्सी का इंतजार कर रहे है। 15-20 मिनट के अंतराल में बमुश्किल एक टैक्सी आती और फुल हो जाती। वजह, पैरिस की यह सड़क शहर की अतिव्यस्त सड़कों में शुमार है। इस ओर आने वाली टैक्सी आते ही बुक हो जाती। दोनो मित्र तीक्षणता से देख रहे थे कि टैक्सी के इंतजार में लोग कैसे बेचैन हो रहे है। वैसे भी किसी भी चीज का इंतजार करना बहुत उबाऊ बेचैन करने वाला होता है। पर ये दोनों अमेरिकी युवक शांतचित्त एकाग्र थे। वजह, इनके मन में कुछ नया करने का विचार कौंध गया था। इस क्रम में खुद से सवाल पूछने लगे, (इस तरह इंतजार करने में लोगों का कितना वक्त बर्बाद होता होगा। टैक्सी में यात्रा करने वाले, यूं पीड़ा भोगने वालों की में संख्या लाखों में होगी क्या हम ऐसा कोई ऐप बना सकते हैं, जो लोगों की समय की इस बर्बादी को रोककर यात्रा को आरामदायक बनाए? ग्राहक खुद ही टेक्सी बुला सके उसे जब भी यात्रा शुरू करनी हो उसके 10-15 मिनट पहले टैक्सी बुक करे और झट से उसे टैक्सी मिल जाए ताकि इंतजार में वक्त बर्बाद न हो सवालों के इन भंवर और इन के समाधान के फल स्वरूप दोनों ने अपने तकनीकी हुनर का हरसंभव उपयोग करने का प्रण लिया। लौटकर कैलिफोर्निया में ऐप बनाया। पहले न्यूयॉर्क में तीन टैक्सी से इसे परखा। सफल होने पर दस टैक्सी के साथ परखते हुए इसकी दिक्कतो, व्यावहारिक पहलुओं को जांचा। धीरे-धीरे लाखों लोग इस ऐप का इस्तेमाल करने लगे। आज विश्व के 66 देशों के 30 लाख से अधिक लोग इस मोबाइल एप के जरिए टैक्सी बुलाते हैं। यह कहानी है टैक्सी सेवा ऐप उबर की। पैरिस के होटल की गैलरी में इंतजार के दौरान जिन्हें इसका विचार आया, वे दो दोस्त थे उबर के फाउंडर्स ट्रैविस कैलेनिक और गेरेट कैंप ट्रैविस-गेरेट को काँधे विचार और उसके समाधान से अरबों डॉलर की कंपनी का जन्म हुआ।

अब बात हमारी अपनी। हम लोग इन दोस्तों की जगह होते तो हमारा व्यवहार होता, चलो मोबाइल लेकर बैठ जाते हैं। दो पांच वॉट्सएप मैसेज पढ़ लेते हैं, चुटकुले फॉरवर्ड कर देते हैं। उन दोस्तो ने इसकी बजाय अच्छे विचार, सृजनात्मक और समस्या के समाधानकारी विचारों पर खुद को केंद्रित रखा।

बस, विचार की बात इतनी-सी है। दरअसल, विचार में प्रचंड शक्ति होती है। नकारात्मक विचार व्यक्ति को निराशा की खाई में धकेल सकते हैं तो सकारात्मक, सृजनात्मक विचार व्यक्ति को सफलता की ऊंचाई तक भी पहुंचाते हैं कमजोर विचार व्यक्ति को मानसिक रूप से कमजोर बना देते हैं। वहीं सशक्त सकारात्मक विचार व्यक्ति को सृजनशीलता की उर्जा से भर देते हैं। हालात की प्रतिकूलता चरम सीमा पर होने पर भी व्यक्ति अच्छे विचारों की शक्ति से समृद्ध है तो वह आनंदित रह सकता है। इसके उत्तर सर्वांगीण सुख समृद्धि सामर्थ्यवान होते हुए भी यदि नकारात्मक विचारों का चंगुल हो तो व्यक्ति अशांत दुखी ही रहता है। इसलिए जरूरी है कि हमेशा सशक्त सार्थक विचार करें। रचनात्मक विचारों का सामर्थ्य बढ़ाएं, संकुचित विचार हमारे विकास में अवरोधक हैं। सकारात्मक विचार हमारी सुख-समृद्धि और सामर्थ्य को मजबूत बनाते हैं। हमारे विकास का आधार हमारे विचार ही हैं।

जापान की कार्य नामक प्रजाति की मछली को यदि छोटे कटोरे में रखा जाता है तो इसका विकास दो से तीन इंच तक ही होता है। बड़े बर्तन, टंकी में रखने पर 10 इंच तक विकास होता है। बड़े तालाब जलाशाय में रखने की स्थिति में यह मछली तीन फुट तक का आकार पाती है। हम मनुष्यों के मामले में भी ऐसा ही है। हमारी दुनिया कैसी और कितनी है उसी पर हमारे विकास का दायरा निर्भर होता है संकुचित विचार हमारे विकास में अवरोधक है। सशक्त सकारात्मक विचार हमारी सुख-समृद्धि और सामर्थ्य को बलवती बनाते हैं।

ऋग्वेद में कहा गया है, आ नो भद्राः कृतवो यन्तु विश्वतः अर्थात सभी दिशाओं से मुझे शुभ विचार प्राप्त हो।

आइए हम इसी दिशा में प्रयासरत रहे. ऐसे विचार करें, ऐसा ही पढ़ें सुनें और देखें जो हममें सकारात्मक विचारों का संचार करें। हमें अशुभ विचार और भावनाओं से दूर रखें। बस इतना ही कर सकें तो जीवन के सार्थक होने की दिशा अवश्य ही हमें मिलेगी।

- दर्पण खंडेलवाल, द्वितीय वर्ष स्नात्कोत्तर- भौतिकी विभाग।

माँ के बिना दिनचर्या

कभी सोचा नहीं था,
अपनी माँ से इतने दिन दूर रहूँगी।
लेकिन क्या करूं माँ,
फोन में ही आपकी आवाज़ सुनकर काम चला लूँगी।
सुबह की कॉफी और आपके साथ योगा करना,
बहुत याद आता है। लेकिन क्या करूं मां,
आपके व्हाट्सएप में भेजी गई कॉफी से काम चलाना पड़ता है।
पूरी दिनचर्या से थक कर आकर,
आपका हाथ फेरना बहुत याद आता है।
लेकिन क्या करू माँ
उन फेरे गए हाथों का अनुभव लेकर काम चलाना पड़ता है।
शाम को आपके साथ बैठकर, अपनी दिनचर्या का विवरण देना बहुत याद आता है।
लेकिन क्या करू माँ
आपसे फोन में बात करके
अपना काम चलाना पड़ता है।
हर त्यौहार में आपके द्वारा बनाए गए
पकवान बहुत याद आते हैं।
लेकिन क्या करु माँ, दोस्तों से ही उन पकवानों का जिक्र कर पेट भरना पड़ता है।
निराशा भरे दिन में आपके द्वारा,
आशा की किरण जगाना बहुत याद आता है।
लेकिन क्या करूँ माँ,
आपके द्वारा दी गई सीख से ही काम चलाना पड़ता है।
कभी सोचा नहीं था, अपनी माँ से इतने दिन दूर रहूँगी, लेकिन क्या करूँ माँ,
फोन में ही आपकी आवाज सुनकर काम चला लूँगी।

मालविका बिश्ट
स्नात्ताकोत्तर द्वितीय वर्ष, रसायन शास्त्र विभाग

राब्ता

ज़रा सा भी जाने का मन हो तो चले जाना रुकना मत, क्यूंकि मैं भी यही करता हूँ जुदाई का सबब पता हो या न हो, राब्ता क्या था ये याद रखता हूँ तुम खतों को जलाओ या ना जलाओ तुम पर है, मैं उन्हें सम्भाल रखता हूँ।

गीले - शिक़वे तो भूल जाता हूँ अक्सर, लेकिन जहां से गुज़रे थे तुम और मैं, हम बनकर उन रास्तों को याद रखता हूँ।

ये वार ये तारीख़े कम याद रहती है मुझे चली थी आंधी, गिरे होंगे पेड़ कई, टूटे थे फूल कई इन सब के बीच तुम्हारा बिछड़ना याद रखता हूँ

अरे !

याद आया आख़रि में भी तो बशर हूँ वक्त के साथ बदलना और बढ़ना है मुझे ये याद रखता हूँ

- अभिषेक जाखड़
तृतीय वर्ष, विद्युत अभियांत्रिकी विभाग

वक्त

वक्त से लड़, अपना नसीब बदल ले, लकीरों में जो था लिखा, तू उसकी तस्वीर बदल ले, कौन जाने कल क्या हो, तो समय पर ना छोड़ कुछ, तू स्वयं ही अपनी तकदीर बदल ले।

यूँ तो कई कठिनाईयां आएंगी, (2) पर अवसर भी तो साथ ही लाएंगी। यदि पांडवों सी नियती आएगी, तो कृष्ण भी तेरे पाले में लाएगी।

तो छोड़ व्यर्थ की चिन्ता, मत सोच, पिछला या आगे का, डटा रह कर्मयोगी बनकर, कौन जाने कब, ये वक्त अपनी रीत बदल लें।

साहस से तो समय भी हारा है, (2) सौ कौरवों को, पाँच पांडवों ने मारा है। तो निश्चित कर लक्ष्य अपना, और बढ़ा कदम, कौन जाने कब, तुझे देख, ये ज़माना अपनी सीख बदल ले।

- निश्चल सैनी
शोधार्थी, भौतिक शास्त्र विभाग

माँ

तू इतनी सुंदर है, शायद ही तुझसा कोई हो
तु माँ है शायद तुझसा कोई हो
तेरे जीने की वजह तेरा परिवार होता है
तुझे कैसे सबसे इतना प्यार होता है।
खुद को तू वक्त कभी देती नहीं
अपनों के खिलाफ कुछ सहती नहीं
माँ तुझ जैसा बनना असंभव सा लगता है।
किसी से इतना प्यार पाना सपना लगता है।
इतना बड़ा दिल की पूरी दुनिया समां जाये।
इतना त्याग सबके लिये की तुझे भगवान कहा जाये।
अपने हर हाल को तू ठीक कहती है।
हमारे लिये मुश्किलें तू हंसकर सह लेती है
माँ तू एक अनूठा है, ये बात मैंने मान ली है
तू धरती पर भगवान का रूप है,
ये बात मैंने जान ली है।

- दीपक शर्मा
शोधार्थी, रसायन शास्त्र विभाग

संसार में जो दुःख आते हैं वे हमारे द्वारा धर्म की विराधना होने से आते हैं।

प्रकाशक एवं **सम्पादक आचार्य (डॉ.) ज्योति जोशी**, मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जयपुर, मालवीय नगर, जयपुर-302 017 • फोन : 9413971604, ई-मेल : malaviyaprakash.lokmat@gmail.com
लेजर टाईप सैटिंग एवं मुद्रण स्थल : द् प्रिण्ट पैलेस, कैलगिरी रोड, मालवीय नगर, जयपुर-302 017 • फोन : 0141-4002016 • www.theprintpalace.com